तीन सौ रामायणें : पांच उदाहरण और अनुवाद पर तीन विचार

– ए. के. रामानुजन

अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर ख्याति प्राप्त विद्वान ए के रामानुजन द्वारा 1987 में लिखे निबंध 'Three Hundred Ramayanas: Five Examples and Three Thoughts on Translation' का हिन्दी अनुवाद यहां प्रस्तुत किया जा रहा है। हिन्दुत्ववादियों के विरोध के आगे झुकते हुए दिल्ली विश्वविद्यालय प्रशासन ने वर्ष 2011 में इसे पाठ्यक्रम से निकाल दिया। इस लेख में रामानुजन ने रामकथा के विभिन्न भाषाओं तथा विभिन्न संस्कृतियों में प्रचलित 'कथनों', वाचनों एवं प्रकारों को बेहद बारीकी के साथ निरुपित किया है। रामकथा के वैविध्य का जिक्र करते हुए रामानुजन ने बताया है कि इसकी गणना लगभग एक असंभव कार्य है क्योंकि यह कथा सामाजिक प्रक्रिया में निर्मित हुई है तथा उन्हें निरंतर प्रभावित भी करती रही है। अलग-अलग क्षेत्रों तथा संस्कृतियों में प्रचलित रामकथा के विविध रूपों के अंतर्संबंध को यह लेख बेहतरीन ढंग से व्याख्यायित करता है। प्रस्तुत रूपांतर अनुवाद की सर्जनात्मकता के लिहाज से भी पठनीय है, अनुवादक हैं हिन्दी के महत्वपूर्ण आलोचक संजीव कुमार. – **Ed. debateonline**

अनुवादक की ओर से :

- रामायण शब्द संस्कृत व्याकरण के हिसाब से नपुंसक लिंग है और हिंदी के प्रचलन के अनुसार स्त्रीलिंग। यहां उसे स्त्रीलिंग में ही रखा गया है। स्त्रीलिंग के अनुरूप ही उसके रूप–परिवर्तन भी किये गये हैं, जैसे 'कितनी रामायणें'। यह थोड़ा अजीब लग सकता है, लेकिन रामायण का बहुवचन रूप तो ऐसे ही बनेगा। अगर यह पुल्लिंग शब्द होता तो साथ में कारक चिह्न न होने की स्थिति में बहुवचन बनाते हुए 'कितने खेल' की तरह 'कितने रामायण' कहते; स्त्रीलिंग है तो 'कितनी भूलें' की तरह 'कितनी रामायणें' कहना होगा। इस बहुवचन रूप में जो थोड़ा अटपटापन महसूस होता है, वह इस कारण कि हम इस शब्द का बहुवचन में प्रयोग करने के अभ्यस्त नहीं रहे हैं। पर खुद को अभ्यस्त बनाना हमारी ज़िम्मेदारी है, ख़ास तौर से रामानुजन के इस लेख को पढ़ते हुए, जिसका मुख्य ज़ोर ही रामायणों को बहुवचन में समझने पर है।
- मैंने कोशिश की है कि मूल लेख के वाक्यों के आशय, स्वर, शैली, क्रम इत्यादि से कम–से–कम विचलित हुआ जाये; विचलन हो तो बस उतना ही जितना हिंदी की प्रकृति के अनुरूप ढालने के लिए निहायत ज़रूरी है। हां, कहीं–कहीं अपनी ओर से शब्द या वाक्यांश जोड़ देने की ज़रूरत महसूस हुई। वहां मैंने उस शब्द या वाक्यांश को बड़े कोष्ठकों [...] में रखा है।

- अंग्रेज़ी में क्रियापदों का अलग से कोई सम्मानसूचक रूप नहीं है, पर हिंदी में बहुवचन के क्रियारूपों को एकवचन में सम्मानसूचक क्रियारूपों की तरह इस्तेमाल किया जाता है। अनुवाद में यह चीज़ ख़ासी दिक़्क़त पैदा करती है। आम चलन यह है कि अंग्रेज़ी में 'राम गोज़' लिखा हो, तो हिंदी में 'राम जाते हैं' हो जाता है और अंग्रेज़ी का 'रावण गोज़' हिंदी में 'रावण जाता है'। मैंने राम के साथ–साथ रावण के लिए भी सम्मानसूचक क्रियारूप इस्तेमाल किये हैं; यही इस लेख की मूल भावना के अनुरूप है।
- एक जगह भाषा पर विचार करने वाले दार्शनिक पीअर्स की शब्दावली की मदद लेते हुए रामानुजन ने अनुवाद के तीन प्रकारों की चर्चा की है; वहां मैंने शब्दावली को ज्यों–का–त्यों रहने दिया है। वस्तु को इंगित करने के तरीकों के आधार पर पीअर्स ने संकेतों (साइन) के तीन प्रकार बताये थेः आइकॉन, इंडेक्स और सिंबल। रामानुजन ने इसी को आधार बनाते हुए आइकॉनिक, इंडेक्सिकल और सिंबॉलिक अनुवादों की चर्चा की है। इनके आशय वे खुद स्पष्ट करते चलते हैं। इसलिए भी इनका हिंदी प्रतिशब्द ढूंढ़ने/गढ़ने की ज़रूरत महसूस नहीं हुई। अगर मैं इन्हें क्रमशः 'प्रतिमावत', 'सूचक' और 'प्रतीकात्मक' कह भी देता तो क्या हासिल हो जाता! उल्टे, iconicity का अनुवाद करने में बुद्धि जवाब दे जाती (दे गयी, आप समझ ही सकते हैं)। फ़िलहाल, इसे हिंदी में मैंने 'आइकॉनिकता' कहा है। आशा है, यह आपको बहुत उचित नहीं भी, तो कम–से–कम मज़ेदार और संप्रेषणीय अवश्य लगेगा।
- श्री रामानुजन ने अपने अंग्रेज़ी लेख में वाल्मीकि रामायण का जो लंबा अंश उद्धृत किया है, वह खुद उनका और डेविड शुलमैन का किया हुआ अंग्रेज़ी अनुवाद है। उसका हिंदी में उल्था करने के बजाय मैंने हिंदी में उपलब्ध अनुवाद (जयकृष्ण मिश्र 'सर्वेश' शास्त्री कृत) का इस्तेमाल किया है, जिसका हवाला यथास्थान दे दिया गया है। हिंदी में उपलब्ध इस बहुत उम्दा अनुवाद की एक ही दिक़्क़त है कि यह पद्यानुवाद है, इसलिए थोड़ा मुश्किल है। मात्राएं और तुक मिलाने की मजबूरी हो तो थोड़े बेतुके शब्द आ ही जाते हैं। मात्राएं और तुक मिलाने की चिंता अनुवादक की प्राथमिकताओं को प्रभावित करती हुई अगर कहीं–कहीं मूल से थोड़ा विचलित भी करवा देती हो तो कोई आश्चर्य नहीं। पर यह देख कर मैं 'निफिकिर' हो गया कि मूल से थोड़ा–बहुत विचलन तो खुद रामानुजन के अंग्रेज़ी अनुवाद में भी है। महत्वपूर्ण यह है कि दोनों जगह इस थोड़े–बहुत विचलन से, उद्धृत प्रसंग के उस पक्ष पर कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता जिसे सामने रखने के लिए उसे उद्धृत किया गया है।
- कम्ब रामायण का भी हिंदी में उपलब्ध आचार्य ति. शेषाद्रि का अनुवाद मेरे काम आया है, लेकिन उसे ज्यों–का–त्यों उद्धृत नहीं किया गया है, क्योंकि दोनों जगह पद–संख्याओं का अंतर देख कर मैं 'निफिकिर' नहीं रह पाया। रामानुजन के अनुवाद के साथ उक्त हिंदी अनुवाद का मिलान करते हुए ऐसा भी लगता रहा कि वे जिन अलग–अलग संस्करणों को आधार बना रहे हैं, उनमें पदों की क्रम–संख्या के स्तर पर ही नहीं, कहीं–कहीं कथ्य के स्तर पर भी फ़र्क़ है; या संभव है, वह रामानुजन और आचार्य ति. शेषाद्रि के समझने का अंतर हो। जो भी हो, मैंने किया यह कि दोनों अनुवादों को एक–दूसरे से भिड़ाते हुए, और आचार्य शेषाद्रि के अनुवाद से कई जगह पूरे–पूरे वाक्य उधार लेते हुए, रामानुजन द्वारा उद्धृत पदों के मायने पूरी तरह से गद्य में लिख दिये, ज़ाहिर है, गद्य को भी थोड़ा काव्यात्मक बनाये रखने की कोशिश करते हुए।
- इस लेख का एक अनुवाद 2010 में 'वाक्' पत्रिका में छप चुका है। जब मैंने अनुवाद–कार्य शुरू किया था, तब यह बात पता नहीं थी। पूरा होने के आसपास इसका पता लगा तो पहले थोड़ा अफ़सोस हुआ कि ख़ामख़ा अनुवाद कर डाला, लेकिन उस अनुवाद को देख लेने के बाद अफ़सोस जाता रहा।

– संजीव कुमार

कितनी रामायणें? तीन सौ? तीन हज़ार? कुछ रामायणों के अंत में कभी–कभी यह सवाल पूछा जाता है कि रामायणों की कुल संख्या क्या रही है? और इस सवाल का उत्तर देने वाली कहानियां भी हैं। उनमें से एक कहानी यों है।

एक दिन राम अपने सिंहासन पर बैठे हुए थे कि उनकी अंगूठी गिर गयी। गिरते ही ज़मीन को छेदती हुई अंगूठी उसी में खो हो गयी। राम के विश्वसनीय अनुचर, हनुमान, उनके चरणों में बैठे थे। राम ने उनसे कहा, ''मेरी अंगूठी खो गयी है। उसे ढूंढ़ लाओ।''

हनुमान तो ऐसे हैं कि वे किसी भी छिद्र में घुस सकते हैं, वह कितना भी छोटा क्यों न हो! उनमें छोटी–से–छोटी वस्तु से भी छोटा और बड़ी–से–बड़ी वस्तु से भी बड़ा बन जाने की क्षमता थी। इसलिए उन्होंने अतिलघु आकार धारण किया और छेद में घुस गये।

चलते गये, चलते गये, चलते गये और अचानक आ गिरे पाताललोक में। वहां कई स्त्रियां थीं। [वे कोलाहल करने लगीं,] ''अरे, देखो देखो, ऊपर से एक छोटा–सा बंदर गिरा है!'' उन्होंने हनुमान को पकड़ा और एक थाली में सजा दिया। पाताललोक में रहने वाले भूतों के राजा को जीवजंतु खाना पसंद है। लिहाज़ा हनुमान शाक–सब्ज़ियों के साथ डिनर के तौर पर उसके पास भेज दिये गये। थाली पर बैठे हनुमान पसोपेश में थे कि अब क्या करें।

पाताललोक में जब यह सब चल रहा था, राम धरती पर अपने सिंहासन पर विराजमान थे। महर्षि वशिष्ठ और भगवन ब्रह्मा उनसे मिलने आये। उन्होंने राम से कहा, ''हम आपसे एकांत में वार्ता करना चाहते हैं। हम नहीं चाहते कि कोई हमारी बात सुने या उसमें बाधा डाले। क्या आपको यह स्वीकार है?''

''स्वीकार है,'' राम ने कहा।

इस पर वे बोले, ''तो फिर एक नियम बनायें। अगर हमारी वार्ता के समय कोई यहां आयेगा तो उसका शिरोच्छेद कर दिया जायेगा।''

''जैसी आपकी इच्छा,'' राम ने कहा।

अब सवाल था कि सबसे विश्वसनीय द्वारपाल कौन होगा? हनुमान तो अंगूठी लाने गये हुए थे। राम लक्ष्मण से ज़्यादा किसी पर भरोसा नहीं करते थे, सो उन्होंने लक्ष्मण को द्वार पर खड़े रहने को कहा। ''किसी को अंदर न आने देना,'' उन्हें हुक्म दिया गया।

लक्ष्मण द्वार पर खड़े थे जब महर्षि विश्वामित्र आये और कहने लगे, ''मुझे राम से शीघ्र मिलना अत्यावश्क है। बताओ, वे कहां हैं?''

लक्ष्मण ने कहा, ''अभी अंदर न जायें। वे कुछ और लोगों के साथ अत्यंत महत्वपूर्ण वार्ता कर रहे हैं।''

''ऐसी कौन–सी बात है जो राम मुझसे छुपायें?'' विश्वामित्र ने कहा, ''मुझे अभी, बिल्कुल अभी अंदर जाना है।''

लक्ष्मण ने कहा, ''आपको अंदर जाने देने से पहले मुझे उनकी अनुमति लेनी होगी।''

''तो जाओ और पूछो।''

''मैं तब तक अंदर नहीं जा सकता, जब तक राम बाहर नहीं आते। आपको प्रतीक्षा करनी होगी।''

''अगर तुम अंदर जाकर मेरी उपस्थिति की सूचना नहीं देते जो मैं अपने अभिशाप से पूरी अयोध्या को भस्मीभूत कर दूंगा,'' विश्वामित्र ने कहा।

लक्ष्मण ने सोचा, ''अगर अभी अंदर जाता हूं तो मरूंगा। पर अगर नहीं जाता तो ये अपने कोप में पूरे राज्य को भस्म कर डालेंगे। समस्त प्रजा, सारी जीवित वस्तुएं जीवन से हाथ धो बैठेंगी। बेहतर है कि मैं ही अकेला मरूं।''

इसलिए वे अंदर चले गये।

राम ने पूछा, ''क्या बात है?''

''महर्षि विश्वामित्र आये हैं।''

''भेज दो।''

विश्वामित्र अंदर गये। एकांत वार्ता तब तक समाप्त हो चुकी थी। ब्रह्मा और वशिष्ठ राम से मिल कर यह कहने आये थे कि ''मर्त्यलोक में आपका कार्य संपन्न हो चुका है। अब रामावतार रूप को आपको त्याग देना चाहिए। यह शरीर छोड़ें और पुनः ईश्वररूप धारण करें।'' यही कुल मिला कर उन्हें कहना था।

अब लक्ष्मण ने राम से कहा, ''भ्राता, आपको मेरा शिरोच्छेद कर देना चाहिए।''

राम ने कहा, ''क्यों? अब हमें कोई और बात नहीं करनी थी। तो मैं तुम्हारा शिरोच्छेद क्यों करूं?''

लक्ष्मण ने कहा, ''नहीं, आप ऐसा नहीं कर सकते। आप मुझे सिर्फ़ इसलिए छोड़ नहीं सकते कि मैं आपका भाई हूं। यह राम के नाम पर एक कलंक होगा। आपने अपनी पत्नी को नहीं छोड़ा। उन्हें वन में भेज दिया। मुझे भी दंड मिलना चाहिए। मैं प्राणत्याग करूंगा।''

लक्ष्मण शेषनाग के अवतार थे जिन पर विष्णु शयन करते हैं। उनका भी समय पूरा हो चुका था। वे सीधे सरयू नदी तक गये और उसके प्रवाह में विलुप्त हो गये।

जब लक्ष्मण ने अपना शरीर त्याग दिया तो राम ने अपने सभी अनुयायियों, विभीषण, सुग्रीव और दूसरों को बुलाया और अपने जुड़वां पुत्रों, लव और कुश, के राज्याभिषेक की व्यवस्था की। इसके बाद राम भी सरयू नदी में प्रवेश कर गये।

इस दौरान हनुमान पाताललोक में थे। उन्हें अंततः भूतों के राजा के पास ले जाया गया। उस समय वे लगातार राम का नाम दुहरा रहे थे, ''राम, राम, राम ...।''

भूतों के राजा ने पूछा, ''तुम कौन हो?''

''हनुमान।''

''हनुमान? यहां क्यों आये हो?''

''श्री राम की अंगूठी एक छिद्र में गिर गयी थी। मैं उसे निकालने आया हूं।''

राजा ने इधर–उधर देखा और हनुमान को एक थाली दिखायी। उस पर हज़ारों अंगूठियां पड़ी थीं। सभी राम की अंगूठियां थीं। राजा हनुमान के पास वह थाली ले आया, उसे नीचे रख कर कहा, ''अपने राम की अंगूठी उठा लो।''

सारी अंगूठियां बिल्कुल एक–सी थीं। ''मैं नहीं जानता कि वह कौन–सी है,'' हनुमान सिर डुलाते हुए बोले।

भूतों के राजा ने कहा, ''इस थाली में जितनी अंगूठियां हैं, उतने ही राम अब तक हो गये हैं। जब तुम धरती पर लौटोगे तो राम नहीं मिलेंगे। राम का यह अवतार अपनी अवधि पूरी कर चुका है। जब भी राम के किसी अवतार की अवधि पूरी होने वाली होती है, उनकी अंगूठी गिर जाती है। मैं उन्हें उठा कर रख लेता हूं। अब तुम जा सकते हो।''

हनुमान वापस लौट गये।[1]

यह कथा सामान्यतः यह बताने के लिए सुनायी जाती है कि ऐसे हर राम के लिए एक रामायण है। रामायणों की संख्या और पिछले पच्चीस सौ या उससे भी अधिक सालों से दक्षिण तथा दक्षिण–पूर्व एशिया में उनके प्रभाव का दायरा हैरतनाक है। जितनी भाषाओं में राम कथा पायी जाती है, उनकी फ़ेहरिस्त बताने में ही आप थक जाएंगे : अन्नामी, बाली, बंगाली, कम्बोडियाई, चीनी, गुजराती, जावाई, कन्नड़, कश्मीरी, खोटानी, लाओसी, मलेशियाई, मराठी, ओड़िया, प्राकृत, संस्कृत, संथाली, सिंहली, तमिल, तेलुगु, थाई, तिब्बती – पश्चिमी भाषाओं को छोड़ कर यह हाल है। सदियों के सफ़र के दौरान इनमें से कुछ भाषाओं में राम कथा के एकाधिक वाचनों (टेलिंग्स) ने जगह बनायी है। अकेले संस्कृत में मुख़्तलिफ़ आख्यान–विधाओं (प्रबंधकाव्य, पुराण इत्यादि) से जुड़े पच्चीस या उससे भी ज़्यादा वाचन उपलब्ध हैं। अगर हम नाटकों, नृत्य–नाटिकाओं, और शास्त्रीय तथा लोक दोनों परंपराओं के अन्य वाचनों को भी जोड़ दें, तो रामायणों की संख्या और भी बढ़ जाती है। दक्षिण और दक्षिणपूर्व एशियाई संस्कृतियों में इनके साथ शिल्प और नक़्क़ाशी, मुखौटा–नाटकों, कठपुतली नाटकों और छाया–नाट्यों को भी अवश्य जोड़ा जाना चाहिए।[2] रामायण के एक अध्येता, कामिल बुल्के, ने तीन सौ वाचनों की गिनती की है।[3] कोई हैरत नहीं कि चौदहवीं सदी में ही एक कन्नड़ कवि कुमारव्यास ने *महाभारत* लिखना इसलिए तय किया कि उसने धरती को धारण करने वाले ब्रह्मांडीय सर्प [शेषनाग] को रामायणी कवियों के बोझ तले आर्तनाद करते सुना। इस पर्चे में, जिसके लिए मैं बहुसंख्य पूर्ववर्ती अनुवादकों और विद्वानों का ऋणी हूं, मैं यह देखना चाहूंगा कि मुख़्तलिफ़ संस्कृतियों, भाषाओं, और धार्मिक परंपराओं में एक कथा के ये सैंकड़ों वाचन परस्पर कैसे संबंधित हैं : उनमें क्या–क्या अनूदित, प्रत्यारोपित, पक्षांतरित होता है।

वाल्मीकि और कम्बन : दो अहिल्याएं

ज़ाहिर है, ये सैंकड़ों वाचन एक दूसरे से भिन्न हैं। मैंने प्रचलित शब्द पाठांतर (वर्ज़न्स) या रूपांतर (वैरिएन्ट्स) की जगह वाचन (टेलिंग्स) कहना पसंद किया है तो इसका कारण है कि पाठांतर और रूपांतर, दोनों शब्द यह आशय भी देते हैं कि एक कोई मूल या आदि पाठ है [जिसे पैमाना बना कर इन भटकावों की पहचान की जा सकती है]। सामान्यतः वाल्मीकि की संस्कृत *रामायण* को वह दर्जा मिलता है, जो कि सभी रामायणों में सबसे आरंभिक और प्रतिष्ठित है। लेकिन जैसा कि हम देखेंगे, हमेशा वाल्मीकि के आख्यान को ही एक से दूसरी भाषा में ले जाने का काम नहीं होता रहा है।

शुरुआत करने से पहले कुछ अंतरों को चिह्नित कर लेना उपयोगी होगा। स्वयं परंपरा एक ओर रामकथा और दूसरी ओर वाल्मीकि, कम्बन या कृत्तिवास जैसे विशिष्ट व्यक्तियों द्वारा रचित पाठों के बीच फ़र्क़ करती है। हालांकि बाद वाले कई पाठ भी लोकप्रिय स्तर पर रामायण ही कहे जाते हैं (मसलन, *कम्बनरामायणम*), लेकिन कुछ ही पाठों के नाम में सचमुच रामायण लगा हुआ है; *इरामावतारम, रामचरितमानस, रामकियेन* – इस तरह के नाम दिये गये हैं। वाल्मीकि द्वारा कही गयी रामकथा के साथ उनके संबंध भी जुदा–जुदा हैं। कथा और काव्य का यह पारंपरिक अंतर फ्रेंच के 'सुजेट' और 'रेसिट', या अंग्रेज़ी के 'स्टोरी' और 'डिस्कोर्स' के अंतर से मेल खाता है।[4] यह वाक्य और कथन के अंतर जैसा भी है। हो सकता है, दो वाचनों में कथा समान हो, पर विमर्श बहुत भिन्न। यहां तक कि घटनाओं की संरचना और उनका क्रम समान हो, पर शैली, ब्यौरे, स्वर और टेक्स्चर (बुनावट) – और इसीलिए अभिप्राय – बहुत अलग हों।

यहां 'एक ही' प्रसंग के दो वाचन दिये जा रहे हैं। यह प्रसंग दोनों जगह कथा की घटना–शृंखला में समान बिंदु पर आता है। पहला वाल्मीकि की संस्कृत *रामायण* के प्रथम खंड (बालकांड) से लिया गया है; दूसरा तमिल में लिखी गयी कम्बन की *इरामावतारम* के प्रथम सर्ग (पालकांतम) से है। दोनों में अहिल्या की कथा है।

अहिल्या प्रकरण : वाल्मीकि

साधु–साधु! कह, जनकपुरी की सुषमा देखी मिथिला जाकर।
बहुत प्रशंसा की ऋषियों ने इसकी, अतुलित दिव्य बताकर।।

उपवन में था रम्य पुरातन आश्रम एक, किंतु था निर्जन।
उसे देखकर प्रश्न–रूप में ऋषि से बोले तब रघुनंदन।।

आश्रम–जैसा, मुनि–विहीन यह स्थान कौन है भगवन! उत्तम?।
पहले था किसका? सुनने को इच्छुक हूं, बतलाएं! सक्षम!।।

राघव के इस प्रश्न–वाक्य को भलीभांति से तब फिर सुनकर।
अति तेजस्वी वाक्य–विशारद बोले विश्वामित्र मुनीश्वर।।

पूर्व महात्मा थे इसके जो, किया जिन्होंने इसको शापित।
सुनो राम! उनका, आश्रम का वृत्त सर्वथा हो ध्यानस्थित।।

पूर्व समय यह स्थान महात्मा गौतम का आश्रम था नरवर!।
परम दिव्य, पूजा, सुप्रशंसा करते थे इसकी सब सुरवर।।

पहले यहीं अहल्या के संग श्री महर्षि गौतम ने रहकर।
वर्ष बिताये बहुत राज–सुत! करते हुए तपस्या गुरुतर।।

एक समय गौतम–अनुपस्थिति में उपयुक्त सुअवसर पाकर।
शचीनाथ ने ऋषि–स्वरूप रख कहा अहिल्या से यह आकर।।

समाहिते! ऋतुकाल–प्रतीक्षा करते नहीं रतीच्छा–रत नर।
अतः चाहता कटि–सुरम्य! तुमसे मैं संगम इस अवसर पर।।

मुनि रूपी हैं इंद्र, समझकर भी दुर्मेधा ने, रघुनंदन।
कौतूहलवश सहस्राक्ष संग संगम का कर दिया समर्थन।।

बोली रति–तुष्टा ऋषि–पत्नी मैं कृतार्थ हूं अतिशय सुरवर!।
प्रभो! आप अब इस आश्रम से यत्नपूर्वक जाएं सत्वर।।

मेरी और स्वयं की रक्षा ऋषि–प्रकोप से करें सुरेश्वर!।
तब बोले यह वाक्य अहल्या से, महेंद्र वे तत्क्षण हंसकर।।

मैं जैसे आया था सुंदरि! उसी भांति से जाऊंगा अब।
इंद्र अहल्या से संगम कर आश्रम से बाहर आये तब।।

गौतम के आने की शंका से थे इंद्र पलायन–तत्पर।
तब देखा करते प्रवेश हैं आश्रम में प्रत्यक्ष मुनीश्वर।।

देव–दनुज–दुर्धर्ष तपोबल से वे मुनिवर परम समन्वित।
तीर्थोदक–सिंचित शरीर से अग्नि–सदृश होते थे दीपित।।

हाथों में वे लिये हुए थे समिधाएं, कुश यज्ञ–कार्य हित।
उन्हें देखते ही विषण्णमुख इंद्र हुए भय से अतिकंपित।।

परम दुराचारी महेंद्र को मुनिस्वरूप में तभी देखकर।
मुनिवर गौतम कुपित हुए अति फिर वे बोले सदाचारि वर।।

रखकर मेरा रूप दुर्मते! पापकर्म करने से अतिशय।
होगा विफल (अंडकोषों से) मुझसे शापित होकर निश्चय।।

कुपित महात्मा गौतम–मुख से निकले जैसे ही शाप–वचन।
वैसे ही उस समय इंद्र के हुआ अंडकोषों का प्रपतन।।

वे मुनि देकर शाप इंद्र को हुए अहल्या पर भी प्रकुपित।
उससे बोले, वर्ष सहस्रों यही रहेगी तू भी शापित।।

पीकर पवन, भस्म में रहकर क्षुधा, तृषा के कष्ट सहेगी।
सभी प्राणियों से अदृश्य हो इस आश्रम में वास करेगी।।

जब इस घोर विपिन में भार्ये! अति दुर्धर्ष राम आयेंगे।
तब हो पायेगी पवित्र तू पाप–व्यूह सब मिट जायेंगे।।

लोभ, मोह, सब दोष मिटेंगे उनका ही करने से आदर।
पास हमारे तू आयेगी दिव्य देह अपना फिर पाकर।।

अपनी दुराचारिणी पत्नी से ऐसा कहकर तदनंतर।
महातपस्वी अतितेजस्वी गौतम गये निजाश्रम तजकर।।

और सिद्ध–चारण–जन–सेवित हिमगिरी के रमणीय शिखर पर।
(जाकर करने लगे तपस्या शुभाचरण में होकर तत्पर)।।

होकर अंडकोषों से वंचित वे महेंद्र संत्रस्त नयन अति।
बोले अग्नि, सिद्ध, चारण, सुर और सभी गंधर्वों के प्रति।।

देवो! गौतम–तप खंडन कर मैंने किया उन्हें प्रकुपित।
इससे सिद्ध किया है निश्चर्य कार्य आप सबका ही समुचित।।

मुझे शाप देकर अफल किया, फिर निज पत्नी को त्याग दिया है।
क्रोधित मुनि ने, इससे मैंने उनके तप का हरण किया है।।

अपनी कार्य–सिद्ध–कर्ता को यत्नपूर्वक सुर, ऋषि, चारण।
अंडकोषों से युक्त करें! अब जिससे हो संकष्ट–निवारण।।

इंद्र–वचन सुन मरुद्‌गणों संग अग्नि पुरोगम देव, ऋषि प्रमुख।
पितृलोक में जाकर बोले तभी पितृ देवों के सम्मुख।।

मेष आपका वृषण–सहित है और इंद्र हैं वृषण–विवंचित।
पितरो! इससे अर्पित कर दें इसका वृषण शचीपति के हित।।

आप सभी को तुष्ट करेगा अवृषण मेष यहीं पर रहकर।
तथा आपके लिए वृषण से रहित मेष देंगे जो भी नर।।

उन्हें आप सब प्रमुदित होकर देंगे श्रेयस्कर उत्तम फल।
(वे पायेंगे आयु, पुत्र, धन, धान्य आदि सुख निश्चय निश्चल)।।

पितरों ने यह अग्नि–वचन सुन मेष–वृषण का करके त्रोटन।
इंद्र–अंग के उचित स्थान पर एकत्रित हो, किया नियोजन।।

बधिया मेष–प्रयोग तभी से वे आगत, काकुत्स्थ! पितृगण।
करते हैं उपयोग, प्रदाता को देते उत्तम फल तत्क्षण।।

उसी समय से, हे रघुनंदन! मुनि गौतम–तप के प्रभाव से।
धारण करने पड़े इंद्र को मेष–वृषण अति विवश भाव से।।

अब तेजस्वी राम! चलो तुम शीघ्र पुण्यकर्मा आश्रम पर।
और करो उद्धार अहल्या भाग्यवती देवी का सत्वर।।

विश्वामित्र मुनीश्वर का यह भलीभांति से वचन श्रवण कर।
लक्ष्मण–सहित राम आश्रम में हुए प्रविष्ट, उन्हें आगे कर।।

वहां अहल्या भाग्यशालिनी को देखा तप से अति दीपित।
देख न सकते थे जिसको सुर, मानव, दानव बली असीमित।।[5]

अहिल्या प्रकरण : कम्बन

वे प्राचीर–वलयित मिथिला के पास पहुंचे और अलंकृत उच्च पताकाओं वाले प्राचीर के इस पार खड़े हो गये। वहां खुले मैदान में ऊंचाई पर एक काली शिला थी, जो किसी समय में अहिल्या थी, महामहर्षि की वह पत्नी जिसने गृहस्थी की गरिमा को नष्ट करते हुए अपना चरित्र खोया था। (पद संख्या 547)

राम की दृष्टि शिला पर पड़ी। उनकी चरण–धूलि के लगने पर अहिल्या अपने पूर्वरूप में आकर खड़ी हो गयी जैसे भगवान के चरणों में आते ही अविद्या–प्राप्त मिथ्या रूप को छोड़ कर ज्ञानी आत्म–रूप को पा गये हों। (548)

इसके बाद राम विश्वामित्र से पूछते हैं कि यह सुंदर स्त्री पत्थर कैसे बन गयी थी। विश्वामित्र जवाब देते हैं:

सुनिये, एक बार उज्ज्वल कुलिशपाणि इंद्र ने दुर्गुण–विमुक्त–चित्त महर्षि गौतम की अनुपस्थिति के समय उनकी मृगनयनी पत्नी के मनोरम उरोजों के स्पर्श का सुख भोगना चाहा। (551)

कामदेव के बाणों से आहत, भाले की तरह बेधती दृष्टि से आहत इंद्र उस पीड़ा से मुक्ति का उपाय ढूंढ़ते फिरे। एक दिन काम–मोह में अपनी बुद्धि खोकर उन्होंने गौतम को आश्रम से हटाने का उपाय किया; फिर जिन मुनिवर के मन को असत्य छू भी नहीं गया था, उनका रूप धर कर आश्रम में प्रवेश कर गये। (552)

प्रवेश करके वे अहिल्या के साथ संभोग में लग गये। कामोद्दीप्त यह संगम अपूर्व था और इसने मधुर सुरा के समान दोनों को नशे में चूर कर दिया। अहिल्या सत्य जान गयीं, फिर भी संभल नहीं पायीं और मग्न रह गयीं। किंतु त्रिलोचन शिवजी के समान शक्ति रखने वाले मुनि गौतम ने देर नहीं की और त्वरित गति से लौट आये। (553)

गौतम, जो प्रत्यंचा पर रख कर बाण नहीं चलाते थे, शाप और वर की अचूक शक्ति से संपन्न थे। जब वे आये, तो उन्हें देख कर असमाप्य विश्व में कभी समाप्त न होने वाली निंदा का पात्र बनी अहिल्या भयभीत हो एक ओर खड़ी रहीं। डर से इंद्र भी कांप गये और एक बिल्ली का रूप लेकर वहां से खिसकने लगे। (554)

जो कुछ हुआ था, उसे आग बरसाती आंखों से देख कर गौतम ने, हे राम! आपके संतापी शर के समान, ये शब्द कहे, 'तुम्हारे शरीर पर सहस्र योनियां उत्पन्न हो जायें।' पलक झपकते ही इंद्र का शरीर उनसे युक्त हो गया। (555)

लज्जा से गड़े हुए और पूरी दुनिया के लिए हास्य का पात्र बन कर इंद्र रवाना हुए। अपनी मृदुल स्वभाव वाली पत्नी को देख मुनि ने शाप दिया, 'ओ वेश्या–समान स्त्री! तू पत्थर बन जा।' और वह कठोर, काली शिला में बदल कर वहीं गिर गयीं। (556)

> फिर भी गिरने से पहले उन्होंने अनुनय किया, 'ओ मेरे शिव–सम स्वामी! कहते हैं, अपराध को क्षमा करना भी बड़ों का कर्तव्य है। आप मुझे शाप–मोचन का कुछ उपाय बताइये।' मुनि ने कहा, 'भ्रमर–गुंजरित शीतल माला से अलंकृत राम आयेंगे। उनकी चरण–धूलि लगने पर तुम्हें इस प्रस्तर–शरीर से मुक्ति मिलेगी।' (557)
>
> उधर देवताओं ने अपने राजा को देखा और ब्रह्मा के नेतृत्व में वे गौतम के पास पहुंचे और गौतम से कृपा करने की प्रार्थना की। गौतम अब तक शांत हो चुके थे। इसलिए उन्होंने उन अवयवों को सहस्र नेत्रों में बदल दिया। अहिल्या पत्थर की मूर्ति बनी पड़ी रहीं। (558)
>
> यही पूर्ववृत्तांत है। अब आगे से संसार के प्राणियों के लिए कोई दुख नहीं होगा, केवल मुक्ति होगी। ओ मेघ–वर्ण प्रभु श्रीराम! अंजन वर्ण (काले रंग) की ताड़का से जो आपने युद्ध किया उसमें मैंने आपके हाथ की महिमा देखी और यहां आपके चरणों की। (559)[6]

आइये, ज़रा तेज़ी से इन दो वाचनों के कुछ अंतरों को देखें। वाल्मीकि के यहां इंद्र जिस अहिल्या का शीलभंग करते हैं, वह स्वयं इच्छुक है। कम्बन के यहां अहिल्या यह महसूस करती है कि वह ग़लत कर रही है, लेकिन वह उस निषिद्ध आनंद को छोड़ नहीं सकती; कविता पहले ही यह संकेत कर चुकी है कि उसके विद्वान पतिदेव पूरी तरह अध्यात्मलीन हैं – वहां ऐसे विवरण आते हैं जो मिल कर शीलभंग की घटना को एक मनोवैज्ञानिक सूक्ष्मता दे देते हैं। इंद्र एक बिल्ली का रूप धर कर चुपके से निकल जाना चाहते हैं, जो कि सीधे–सीधे लोकसाहित्य की एक रूढ़ि (मोटिफ़) है (मिसाल के लिए, यह *कथासरित्सागर* में भी मिलता है जो संस्कृत में ग्यारहवीं सदी में किया गया लोककथाओं का एक सार–संग्रह है)।[7] उन्हें शरीर पर हज़ार योनियों को धारण करने का अभिशाप मिलता है, जिसे बदल कर बाद में हज़ार आंखें कर दिया गया है। और अहिल्या एक जड़ पत्थर में तब्दील हो जाती है। दोनों अपराधियों को दंडित करने वाला काव्यात्मक न्याय उनके दुष्कर्मों के अनुरूप है। इंद्र उस वस्तु के चिह्नों को धारण करते हैं जिसके लिए वे लाड़ टपका रहे थे, जबकि अहिल्या किसी भी चीज़ के प्रति अनुक्रियाशील होने की क्षमता से वंचित कर दी जाती है। वाल्मीकि के यहां अनुपस्थित इन अभिप्रायों के साक्ष्य दक्षिण भारतीय लोकसाहित्य और दूसरी दक्षिणी रामकथाओं, अभिलेखों और आरंभिक तमिल काव्यों, साथ–ही–साथ ग़ैर–तमिल स्रोतों में मौजूद हैं। यहां और अन्यत्र भी, कम्बन न सिर्फ़ अपने पूर्ववर्ती वाल्मीकि की सामग्रियों का पूरा–पूरा इस्तेमाल करते हैं, बल्कि अनेक क्षेत्रीय लोक परंपराओं को भी उसमें सम्मिलित करते हैं। बाद को अक्सर कम्बन के ज़रिये ही ये चीज़ें दूसरी रामायणों का हिस्सा बनती हैं।

शिल्पविधि के मामले में कम्बन वाल्मीकि के मुक़ाबले अधिक नाटकीय भी हैं। पहले राम के चरण काले रंग के पत्थर को अहिल्या में रूपांतरित करते हैं, उसके बाद ही अहिल्या की कथा सुनायी जाती है। राम की प्रतीक्षा में एक ऊंची जगह पर स्थित काली शिला अपने–आप में एक बहुत ही प्रभावशाली, जीवंत प्रतीक है। अहिल्या का पुनरुज्जीवन, एक ठंडे प्रस्तर से मांसल मानवीय ऊष्मा की ओर उसका जागरण, भक्तिसाधना के प्रभाव से परमात्मा में उपस्थित अपने रूप के प्रति आत्मा की जागरूकता का अंकन बन जाता है।

और अंत में, अहिल्या प्रकरण काव्य में आये पिछले प्रकरणों से जुड़ा है, जैसे कि उस प्रसंग से जिसमें राम राक्षसी ताड़का का वध करते हैं। वहां वे बुरी शक्तियों के विनाशक थे, अपने शत्रुओं को वन्ध्या बनाने और मृत्यु के मुख में झोंकने वाले। यहां, अहिल्या के उद्धारक के रूप में, वे उर्वरता के मेघ–श्यामल देवता हैं। कम्बन के पूरे काव्य में राम एक तमिल नायक, एक उदार दाता और शत्रुओं के निर्मम विनाशक हैं। और भक्ति का दर्शन, पत्थर बनी हुई अभिशप्त अहिल्या की मुक्ति को, सांसारिक दुखों से सभी आत्माओं की मुक्ति के राम के अवतारी मिशन का उदाहरण बना देता है।

वाल्मीकि के यहां राम का चरित्र ईश्वर का नहीं, बल्कि ईश–मानव का है जिसे तमाम तरह के उतार–चढ़ाव में पड़े मानवीय रूप की सीमाओं के भीतर रहना है। कुछ लोगों का मत है कि राम के ईश्वरत्व और रावण का नाश करने के लिए उनके अवतार–ग्रहण की बातें, और महाकाव्य का पहला और आख़िरी कांड, जिसमें राम को इस तरह

के प्रयोजन के साथ अवतरित ईश्वर के रूप में बखाना गया है, बाद के प्रक्षिप्त अंश हैं।[8] अस्तु, कम्बन के यहां तो वे साफ़ तौर पर भगवान हैं। इसीलिए पीछे उद्धृत अंश धार्मिक भावनाओं और भागवत बिंबों से भरा पड़ा है। 12 वीं सदी में लिख रहे कम्बन ने तमिल भक्ति के प्रभाव में अपनी कविताएं रचीं। उन्होंने श्रीवैष्णव संतों में सबसे प्रमुख, नम्मालवार (9वीं सदी?) को अपना गुरु माना था। इसलिए कम्बन के लिए राम एक भगवान हैं जो बुराइयों को निर्मूल करने, अच्छाई को बनाये रखने, और सभी जीवित प्राणियों को मुक्ति दिलाने के अभियान पर निकले हुए हैं। अहिल्या का सामना होने के साथ यह सिलसिला शुरू होता है और रावण का सामना होने के साथ ख़त्म होता है। नम्मालवार के लिए राम दीनहीन घास से लेकर महान देवताओं तक, सभी के त्राणकर्ता हैं।

राम की कृपा से

राम के सिवा किसी भी चीज़ का ज्ञान
कोई क्यों अर्जित करे?

दीनहीन घास
और रेंगती चींटियों से लेकर
ऐसा क्या है जिसे उन्होंने शरण नहीं दी

उन्होंने प्रत्येक जंगम और जड़ वस्तु को
अपनी नगरी में शरण दी

चतुर्मुख ब्रह्मा की बनायी हुई प्रत्येक वस्तु को
उन्होंने शरण दी

उन सबको शरण देकर
वे सर्वोत्तम अवस्था तक ले गये।

नम्मालवार 7.5.1[9]

कम्बन का महाकाव्य नम्मालवार की रामविषयक दृष्टि को विस्तारपूर्वक और भावाविष्ट तरीके से रूपायित करता है।

इस तरह अहिल्या प्रसंग बुनियादी तौर पर वही है, लेकिन उसकी कताई, उसका टेक्स्चर, उसके रंग बहुत भिन्न हैं। उत्तरवर्ती कवि के वाचन में जो सौंदर्यात्मक आनंद है, वह अंशतः पूर्ववर्ती के काम का कलात्मक विधि से उपयोग करने, उसे परिवर्तित करने का परिणाम है। कुछ हद तक बाद की सभी रामायणें पिछले वाचनों के ज्ञान का लाभ उठाती हैं : [इस तरह] वे [यानी पहले वाली] अधि–रामायणें हैं। मैं अपना पसंदीदा उदाहरण दोहराने से खुद को रोक नहीं पा रहा। बाद की कई रामायणों (जैसे कि 16वीं सदी की *अध्यात्म रामायण*) में जब राम को वनवास मिल जाता है, तो वे नहीं चाहते कि सीता उनके साथ वन जाएं। सीता उनसे तर्क–वितर्क करती हैं। सबसे पहले वे आम चलताऊ दलीलों का प्रयोग करती हैं : वे राम की पत्नी हैं, उन्हें राम के दुखों का साझीदार बनना चाहिए, राम के निर्वासन की स्थिति में उन्हें भी निर्वासित होना चाहिए, वग़ैरह–वग़ैरह। राम इसके बावजूद जब विरोध करते हैं, तो सीता उग्र हो जाती हैं। वे फूट पड़ती हैं, ''असंख्य रामायणें इससे पहले लिखी जा चुकी हैं। क्या आप एक भी ऐसी रामायण जानते हैं जिसमें सीता राम के साथ वन को न गयी हो?'' यहां बहस नतीजे पर पहुंच जाती है और वे राम के साथ वन चली जाती हैं।[10] और चूंकि भारत में कोई भी चीज़ एक ही बार घटित नहीं होती, इसलिए यह मोटिफ़ भी एकाधिक रामायणों में दिखलाई पड़ता है।

खुद कम्बन की तमिल रामायण भी अपनी संतति परंपरा, अपने प्रभाव का विशेष दायरा बनाती है। तेलुगु प्रदेश में तेलुगु लिपि में पढ़ी जाने वाली, मलयालम इलाक़ों में मंदिर अनुष्ठान के हिस्से की तरह नाट्य–रूप में मंचित होने वाली यह रामायण दक्षिणपूर्व एशिया में रामकथा के प्रसारण की एक अहम कड़ी है। यह भलीभांति दिखाया जा चुका है कि अठारहवीं सदी का थाई काव्य *रामकियेन* इस तमिल महाकाव्य का ख़ासा ऋणी है। जैसे, इस थाई कृति में कई चरित्रों के नाम संस्कृत नहीं, स्पष्टतः तमिल नाम हैं (मिसाल के लिए, संस्कृत में ऋष्यशृंग किंतु तमिल में कलाईक्कोटु, जो कि बाद में थाई भाषा में भी ले लिया गया)। हिंदी में तुलसी का *रामचरितमानस* और मलेशियाई *हिकयत सेरी राम* भी कुछ ब्यौरों के लिए कम्बन के ऋणी हैं।[11]

इस तरह, ज़ाहिर है, प्रत्यारोपण कई रास्तों से होता है। संसार की कुछ भाषाओं में चाय के लिए शब्द उत्तरी चीनी बोली से लिया गया है, कुछ में दक्षिणी बोली से; लिहाज़ा, अंगेज़ी और फ्रेंच जैसी कुछ भाषाओं में किसी–न–किसी रूप में *टी* शब्द मिलता है, तो हिंदी और रूसी जैसी अन्य भाषाओं में *चा(य)*। इसी तरह, जान पड़ता है कि रामकथा ने, संतोष देसाई के अनुसार, तीन राहों से होकर सफ़र किया है : ''ज़मीन के रस्ते उत्तरी राह ने कथा को पंजाब और कश्मीर से चीन, तिब्बत और पूर्वी तुर्कीस्तान में पहुंचाया; समुद्र के रस्ते दक्षिणी राह ने कथा को गुजरात और दक्षिण भारत से जावा, सुमात्रा और मलय में पहुंचाया; और फिर ज़मीन के रस्ते पूर्वी राह ने कथा को बंगाल से बर्मा, थाईलैंड और लाओस पहुंचाया। वियतनाम और कंबोडिया ने अपनी कथाएं अंशतः जावा और अंशतः भारत से पूर्वी राह के ज़रिये हासिल कीं।''[12]

जैन वाचन

जब हम जैन वाचनों की दुनिया में दाख़िल होते हैं, तो पाते हैं कि यहां रामकथा हिंदू मूल्यों की वाहक नहीं रह गयी है। निश्चित रूप से, जैन पाठ यह भावना व्यक्त करते हैं कि हिंदुओं, विशेषतः ब्राह्मणों ने रावण को बदनाम किया है, उसे खलनायक बनाया है। एक जैन पाठ इस सवाल साथ शुरू होता है, ''रावण जैसे शक्तिशाली राक्षस योद्धाओं को बंदर कैसे परास्त कर सकते हैं? रावण जैसे कुलीन व्यक्ति और सम्मानित जैन कैसे मांस खा सकते और खून पी सकते हैं? कुंभकर्ण कैसे साल के छह महीने लगातार सो सकता है और कान में खौलता हुआ तेल डाले जाने, हाथियों को उसके ऊपर कुदाये जाने और चारों ओर युद्ध की तुरही और बिगुल बजाये जाने के बावजूद जगता नहीं? यह भी कहा जाता है कि रावण ने इंद्र को पकड़ा और उसके हाथ बांध कर लंका में घसीट लाया। इंद्र के साथ कौन ऐसा कर सकता है? ये सारी बातें बहुत काल्पनिक और अतिवादी प्रतीत होती हैं। ये झूठ हैं और इनमें कोई तार्किक संगति नहीं।'' इन सवालों के साथ राजा श्रेणिका महर्षि गौतम के पास जाते हैं, ताकि वे उन्हें सही कथा बताएं और उनकी शंकाओं का निवारण करें। गौतम उनसे कहते हैं, ''मैं तुम्हें वह बताऊंगा जो सुधी जैन लोग कहते हैं। रावण कोई दानव नहीं है, वह नरभक्षी और मांसाहारी नहीं है। ग़लत ढंग से सोचने वाले कुकवि और मूर्ख ये झूठ बोलते हैं।'' इसके बाद वे कथा का अपना पाठ बताना शुरू करते हैं।[13] स्पष्टतः, विमलसूरि की जैन रामायण, जिसका नाम *पउमचरिय* (संस्कृत के *पद्मचरित* का प्राकृत रूप) है, अपने वाल्मीकि को जानती है और उसके दोषों तथा हिंदू अतिरेकों का मार्जन करने का प्रयास करती है। दूसरे जैन पुराणों की तरह ही यह भी एक प्रति–पुराण है। *प्रति,* यानी 'विपरीत' या 'विरोधी', जैनों का पसंदीदा उपसर्ग है।

जैन कवि विमलसूरि राम की नहीं, बल्कि रावण की वंशपरंपरा और महानता के बखान के साथ कथा की शुरुआत करते हैं। रावण जैन परंपरा के तिरसठ नेताओं या शलाकापुरुषों में से एक हैं। वे कुलीन हैं, विद्वान हैं, अपनी समस्त चमत्कारिक शक्तियां और अस्त्र अपनी तपस्या के द्वारा अर्जित करते हैं, और जैन गुरुओं के भक्त हैं। उनमें से एक गुरु को प्रसन्न करने के लिए वे यह प्रतिज्ञा तक करते हैं कि वे किसी अनिच्छुक स्त्री का स्पर्श तक नहीं करेंगे। एक यादगार घटना वह है जब वे एक अपराजेय दुर्ग को घेरते हैं। उस राज्य की रानी उनसे प्यार करती है। वह उनके पास अपना संदेशवाहक भेजती है; रावण दुर्ग को भेदने में उसके ज्ञान का उपयोग करते हैं और राजा को पराजित करते हैं। लेकिन जैसे ही वे उसे जीतते हैं, तुरंत वह राज्य राजा को वापस कर देते हैं और

रानी को सलाह देते हैं कि अपने पति के पास लौट जाए। बाद में, किसी ज्योतिषी से यह सुन कर वे अंदर तक हिल जाते हैं कि वे एक स्त्री, सीता, के चलते ही अपने अंत को प्राप्त होंगे। इस तरह के हैं ये रावण, जो सीता की सुंदरता से प्रेम करने लगते हैं, उनका अपहरण करते हैं, उनका दिल जीतने की नाकाम कोशिश करते हैं, अपने को पतन का शिकार होता देखते हैं, और अंततः युद्धक्षेत्र में मारे जाते हैं। इन वाचनों में वे एक ऐसे महान व्यक्ति हैं जो अपने उसी आवेग के हाथों नष्ट हो जाता है जिसके ख़िलाफ़ उसने शपथ ली थी पर जिसका मुक़ाबला उससे नहीं हो पाता। जैन रामायणों की एक अन्य परंपरा में सीता उनकी पुत्री हैं, हालांकि उन्हें यह बात पता नहीं है : इस इडीपसीय स्थिति से उनकी त्रासदी और बढ़ जाती है। मैं अगले खंड में सीता के जन्म के बारे में ज़्यादा बात करूंगा।

वस्तुतः, हमारी आधुनिक दृष्टि में, यह रावण एक ट्रैजिक पात्र है; जैनों की कथा सुन कर रावण के लिए हमारे मन में प्रशंसा और दया का भाव जगता है। एक और मोटिफ़ सुनाऊं : जैन चिंतन पद्धति के अनुसार, विरुद्धों की एक जोड़ी, वासुदेव और प्रतिवासुदेव – एक नायक और एक प्रतिनायक, लगभग स्वयं और अन्य की तरह – हर जन्म में लड़ने के लिए अभिशप्त हैं। लक्ष्मण और रावण इस जोड़ी के आठवें अवतार हैं। वे हर युग में जन्म लेते हैं, अनेक उतार–चढ़ावों के बाद संग्राम में आमने–सामने होते हैं, और हर मुठभेड़ में वासुदेव अवश्यंभावी रूप से अपने प्रतिद्वंद्वी को, अपने *प्रति* को, मार डालते हैं। [यहां भी] रावण अंत में यह समझ लेते हैं कि लक्ष्मण उनका जीवन लेने आये वही वासुदेव हैं। फिर भी, शांति के लिए अंतिम असफल प्रयास के बाद अपनी हताशा पर विजय पाते हुए वे अपने सबसे शक्तिशाली चमत्कारी अस्त्रों के साथ अपने नियतिबद्ध शत्रु का सामना करते हैं। अंत में वे अपना चक्र चलाते हैं, पर वह काम नहीं करता। लक्ष्मण को वासुदेव रूप में पहचान कर वह चक्र उनका शिरोच्छेद नहीं करता, बल्कि स्वयं को उनके हाथों में सौंप देता है। इस तरह लक्ष्मण रावण के अपने प्रिय अस्त्र से ही उनका वध कर डालते हैं।

यहां राम रावण का वध नहीं करते, जैसा कि हिंदू रामायणों में मिलता है। कारण यह कि राम एक उन्नत जैन आत्मा हैं जिन्होंने अपने आवेगों को जीत लिया है; यह उनका आख़िरी जन्म है, इसलिए वे किसी को भी मारने के लिए अनिच्छुक हैं। शत्रुओं को मारने का काम लक्ष्मण पर छोड़ दिया गया है, और जैनों के अटल–अनमनीय तर्क के अनुसार लक्ष्मण नरक जाते हैं जबकि राम को कैवल्य प्राप्त होता है।

कहने की ज़रूरत नहीं कि *पउमचरिय* जैन तीर्थस्थलों के हवालों, जैन मुनियों, धर्मोपदेशकों और महापुरुषों की कथाओं से भरा पड़ा है। इसके अलावा, चूंकि जैन लोग खुद को बुद्धिवादी मानते हैं – हिंदुओं से भिन्न, जो कि उनके अनुसार अतिवादी, और अक्सर रक्तपीपासु, क़िस्म के सनकीपने और अनुष्ठानों में लिप्त रहते हैं – वे सुनियोजित रूप से चमत्कारिक जन्मों, पशु–बलियों इत्यादि से जुड़े प्रसंगों को छोड़ देते हैं (राम और उनके भाइयों का जन्म सामान्य तरीके से हुआ है)। वे रावण के दशानन होने की धारणा की भी बुद्धिसंगत व्याख्या करते हैं। रावण के जन्म पर उनकी मां को नौ रत्नों का एक कंठहार दिया गया था, जिसे मां ने रावण के गले में डाल दिया। उन्हें उसमें रावण के मुख के नौ प्रतिबिंब दिखे जिसके चलते उन्होंने रावण को दशमुख कहा। बंदर भी बंदर नहीं हैं, बल्कि दिव्य शक्तियों (विद्याहारों) का एक वंश है जिसके पुरखे रावण और उसके परिवार से संबंधित थे। उनकी पताका पर बंदर प्रतीक चिह्न के रूप में अंकित हैं : इसीलिए वे वानर कहे जाते हैं।

लिखित से मौखिक की ओर

अब हम एक दक्षिण भारतीय लोक रामायण को देखें। इन दक्षिण भारतीय लोक रामायणों में सामान्यतः कथा टुकड़ों–टुकड़ों में आती है। मिसाल के लिए, कन्नड़ में हमें सीता के जन्म, उनके विवाह, उनके सतीत्व की परीक्षा, वनवास, लव और कुश के जन्म, उनके पिता राम के साथ उनका युद्ध, और इस तरह की अन्य चीज़ों पर अलग–अलग आख्यानमूलक काव्य मिलते हैं। लेकिन पारंपरिक भाटों द्वारा कही गयी एक पूरी रामकथा भी मिलती है

जिसमें हर दो पंक्तियों पर समूहगान में दुहरायी जाने वाली एक टेक है। अधोलिखित विचार–विमर्श के लिए मैं रामे गौड़ा, पी. के. राजशेखर और एस. बसवैया द्वारा किये गये लिप्यंकन का आभारी हूं।[14]

अस्पृश्य भाट द्वारा गाया गया यह लोक आख्यान रावण (यहां उसे रावुला कहा गया है) और उसकी पत्नी मंदोदरी के साथ शुरू होता है। वे दुखी और संतानहीन हैं। इसलिए रावण या रावुला जंगल जाते हैं, वहां हर तरह के आत्मपीड़न करते हैं, जैसे भूमि पर लोटते हुए अपनी पीठ से खून निकाल देना इत्यादि, और एक योगी से मिलते हैं जो कोई और नहीं, स्वयं शिव हैं। शिव उन्हें एक चमत्कारी आम देते हैं और पूछते हैं कि वे इसे पत्नी के साथ कैसे बांट कर खायेंगे। रावुला कहते हैं, ''बेशक, मैं इस फल का मीठा गूदा उसे दूंगा और खुद इसकी गुठली चूसूंगा।'' योगी का संदेह बना रहता है। वे रावुला से कहते हैं, ''तुम मुझसे कुछ और बात कहते हो। तुम्हारी नाभि में विष है। तुम मुझे अच्छी बात कह रहे हो, पर तुम्हारा आशय कुछ और है। अगर तुमने मुझसे झूठ कहा तो तुम अपने कर्मों का फल स्वयं चखोगे।''

कवि कहता है कि रावुला सपनों में कुछ और सोचते हैं और जाग्रतावस्था में कुछ और। जब वे आनुष्ठानिक पूजा के लिए कई तरह के फूलों और लोबान आदि के साथ फल को घर लाते हैं तो मंदोदरी बहुत प्रसन्न होती हैं। शिव की पूजा और प्रार्थना के बाद रावण आम का बंटवारा करने चलते हैं। लेकिन सोचते हैं, ''अगर मैं उसे फल दे दूं तो मैं भूखा रह जाऊंगा और उसका पेट भर जायेगा'', और वे तेज़ी से फल का सारा गूदा उदरस्थ कर लेते हैं, मंदोदरी के हाथ सिर्फ़ चाटने के लिए गुठली रहती है। वह उसे पिछवाड़े में फेंक देती है और वह अंकुरित होकर एक विशाल आम्रवृक्ष बन जाता है। इस बीच, रावुला खुद गर्भवान हो जाते हैं और उनकी गर्भावस्था प्रतिदिन एक महीने की प्रगति के हिसाब से आगे बढ़ती है।

> एक दिन में यह एक महीने का था, हे शिव।
> दूसरे दिन, यह दूसरा महीना था,
> और वह दिखने लगा था, हे शिव।
> मैं पुरुषों की दुनिया को कैसे मुंह दिखाऊंगा, हे शिव।
> तीसरे दिन, यह तीसरा महीना था,
> मैं दुनिया को कैसे मुंह दिखाऊंगा, हे शिव।
> चौथे दिन, यह चौथा महीना था
> इसे कैसे सहूं, हे शिव।
> पांच दिन बीते और यह पांच महीने का हो गया,
> हे भगवान, तुमने मुझे क्या मुसीबत दे दी, हे शिव।
> मैं इसे सह नहीं सकता, मैं इसे सह नहीं सकता, हे शिव।
> मैं कैसे जियूंगा, दयनीय रावुला चीत्कार करता है।
> छह दिन, और इसके छह महीने बीत चुके, हे माता,
> सात दिनों में यह सात महीने का था।
> कितना शर्मनाक है,
> और जल्दी ही यह आठवां आ गया, हे शिव।
> रावुला अपना नौवां महीना पूरा कर चुका।
> जब वह पूरी तरह से तैयार हो गया, तब उसने जन्म लिया,
> उस प्रिय सीता ने जन्म लिया उसकी नाक से
> वह छींक मारता है और सीतम्मा जन्म लेती है,
> और रावुला उसे सीतम्मा नाम देता है।[15]

कन्नड़ में सीता शब्द का मतलब है ''उसने छींका'': रावण उसे सीता बुलाते हैं क्योंकि वह उनकी छींक से पैदा हुई है। इस तरह सीता के नाम को एक कन्नड़ लोक–व्युत्पत्ति के द्वारा समझाया गया है, वैसे ही जैसे संस्कृत पाठों में

इस नाम की संस्कृत व्युत्पत्ति मिलती है : वहां राजा जनक उन्हें [खेत में] हल से बनी रेखा में पाते हैं, जिसे सीता कहा जाता है। इसके बाद रावुला ज्योतिषियों के पास जाते हैं, जो उन्हें बताते हैं कि यह शिव के सामने कही गयी बात पर क़ायम न रहने और अपनी पत्नी को फल का गूदा खिलाने की बजाय स्वयं खा लेने का दंड है। वे उसे बच्ची को खिला–पिला कर और वस्त्र पहना कर किसी जगह छोड़ आने की सलाह देते हैं जहां वह किसी दम्पति को मिलेगी और उनके द्वारा पालित–पोषित होगी। रावण उसे एक बक्से में बंद कर जनक के खेत में छोड़ आते हैं।

सीता–जन्म की इस कथा के बाद ही कवि राम और लक्ष्मण के जन्म और कारनामों का वर्णन करता है। उसके बाद एक लंबा खंड आता है जो सीता के विवाह की प्रतियोगिता पर है। वहां रावुला आते हैं और अपमानित होते हैं, क्योंकि जिस भारी धनुष को उठाना है उसके भार से वे गिर जाते हैं। राम उस धनुष को उठा लेते हैं और सीता से विवाह करते हैं। बाद में सीता रावुला के द्वारा अगवा कर ली जाती हैं। राम अपने वानर सहयोगियों के साथ लंका की घेराबंदी करते हैं, और (एक छोटे खंड में) सीता को पुनर्प्राप्त करते हैं और उनका राज्याभिषेक होता है। इसके बाद कवि सीता की परीक्षा के प्रसंग पर आता है। उसके बारे में मिथ्यापवाद फैलता है और उसे राज्य से निकाल दिया जाता है, लेकिन वह जुड़वां बच्चों को जन्म देती है जो बड़े होकर योद्धा बनते हैं। वे राम के अश्वमेध यज्ञ के घोड़े को बांध देते हैं, घोड़े की देखरेख के लिए भेजी गयी सेना को पराजित कर देते हैं और अंततः अपने माता–पिता को फिर से मिला देते हैं, इस बार हमेशा–हमेशा के लिए।

यहां सिर्फ़ एक भिन्न टेक्स्चर और बलाघात ही नहीं दिखता : प्रस्तोता हर जगह सीता की ओर – उनके जीवन, उनके जन्म, उनके विवाह, उनके अपहरण और वापसी की ओर – लौटने के लिए समुत्सुक है। राम और लक्ष्मण के जन्म, वनवास और रावण के साथ युद्ध पर जितने बड़े खंड हैं, उनकी बराबरी के पूरे–पूरे खंड सीता के निर्वासन, गर्भधारण, और पति के साथ पुनर्मिलाप को समर्पित हैं। इसके अलावा, एक पुरुष रावण के गर्भ से पुत्री के रूप में उनका असामान्य जन्म कथा में अनेक नयी व्यंजनाओं को ले आता है : गर्भ और संतानोत्पत्ति के प्रति पुरुष–ईर्ष्या, जो कि भारतीय साहित्य में बारंबार आने वाली एक थीम है, और पुत्रियों के पीछे लगे पिताओं – और, इस मामले में, अगम्यगमन करने वाले पिता की मृत्यु का कारण बनने वाली पुत्री – से जुड़ी भारतीय इडीपसीय थीम।[16] अन्यत्र भी सीता के रावण की पुत्री होने का मोटिफ़ अनजाना नहीं है। यह जैन कथाओं की एक परंपरा (उदाहरण के लिए, *वासुदेवाहिमदी*) में और कन्नड़ तथा तेलुगु की लोक परंपराओं में, साथ ही साथ अनेक दक्षिणपूर्व एशियाई रामायणों में आता है। कुछ जगहों पर ये आता है कि रावण अपनी लोलुप युवावस्था में एक युवती का मर्दन करता है, जो प्रतिशोध लेने का संकल्प करती है ओर फिर उसका नाश करने के लिए उसकी पुत्री के रूप में पुनर्जन्म लेती है। इस तरह मौखिक परंपरा प्रसंगों के एक ऐसे, बिल्कुल अलग, समूह में भागीदारी करती प्रतीत होती है जो वाल्मीकि के यहां अज्ञात है।

दक्षिणपूर्व एशिया का एक उदाहरण

भारत से दक्षिणपूर्व एशिया की ओर जाने पर हमें तिब्बत, थाईलैंड, बर्मा, लाओस, कंबोडिया, मलेशिया, जावा और इंडोनेशिया में रामकथा के भिन्न–भिन्न वाचन मिलते हैं। यहां हम सिर्फ़ एक उदाहरण, थाई रामायण *रामकीर्ति,* को देखेंगे। संतोष देसाई के अनुसार, थाई जीवन को रामकथा से ज़्यादा हिंदू मूल की किसी और चीज़ ने प्रभावित नहीं किया है।[17] उनके बौद्ध मंदिरों की दीवारों पर की गयी नक़्क़ाशी और चित्रकारी, शहरों और गांवों में खेले जाने वाले नाटक, उनकी नृत्यनाटिकाएं – ये सभी रामकथा की सामग्री का इस्तेमाल करते हैं। 'राजा राम' नाम के एक–के–बाद–एक कई राजाओं ने थाई में रामायण के प्रसंग लिखे : राजा राम प्रथम ने पचास हज़ार छंदों में रामायण का एक वाचन लिखा, राम द्वितीय ने नृत्य के लिए नये प्रसंग लिखे, और राम षष्ठ ने अनेक दूसरे प्रसंग जोड़े जिनमें से ज़्यादातर वाल्मीकि से लिये गये थे। थाईलैंड की लोपबुरी (संस्कृत में लावापुरी), खिडकिन (किष्किंधा), और अयुथिया (अयोध्या) जैसी जगहें, अपनी ख्मेर और थाई कला के भग्नावशेषों के साथ, राम के आख्यान से संबद्ध हैं।

थाई *रामकीर्ति* या *रामकियेन* (रामकहानी) कथा के तीन तरह के चरित्रों की उत्पत्ति के वर्णन के साथ शुरू होती है – मानवीय, दानवी और वानरी। दूसरा खंड दानवों के साथ भाइयों की पहली मुठभेड़, राम के विवाह और निर्वासन, सीता के अपहरण और राम की वानर कुल से मुलाक़ात का वर्णन करता है। इसमें युद्ध की तैयारियों, हनुमान के लंका–गमन और दहन, सेतु निर्माण, लंका की घेराबंदी, रावण के पतन और सीता एवं राम के पुनर्मिलन का भी वर्णन है। तीसरे खंड में लंका में एक विद्रोह का वर्णन है, जिस विद्रोह को दबाने के लिए राम अपने दो सबसे छोटे भाइयों को नियुक्त करते हैं। इस खंड में सीता के निर्वासन, उनके पुत्रों के जन्म, राम के साथ उनके युद्ध, सीता के धरती में प्रवेश और राम–सीता को मिलाने के लिए देवताओं के प्रकट होने का वर्णन है। हालांकि कई प्रसंग बिल्कुल वाल्मीकि की *रामायण* जैसे ही दिखते हैं, पर साथ ही कई चीज़ें अलहदा भी हैं। मिसाल के लिए, दक्षिण भारतीय लोक रामायणों की तरह (और कुछ जैन, बांग्ला और कश्मीरी रामायणों की तरह भी) सीता के निर्वासन को एक नया नाटकीय तर्काधार दिया गया है। शूर्पणखा (वह दानवी जिसका वर्षों पहले जंगल में राम और लक्ष्मण ने अंगभंग किया था) की बेटी सीता को अपनी माता के विकृत किये जाने के लिए ज़िम्मेदार मानती है और उससे बदला लेने के लिए तैयार बैठी है। वह अयोध्या आती है, एक दासी के रूप में सीता की सेवा में नियुक्त होती है, और रावण की एक तस्वीर बनाने के लिए उसे प्रेरित करती है। यह तस्वीर बनने पर अमिट हो जाती है (कुछ वाचनों में, यह सीता के शयनकक्ष में प्राणवंत हो उठती है) और राम का ध्यान अपनी ओर खींच लेती है। ईर्ष्या के आवेग में राम सीता को मार डालने का आदेश जारी करते हैं। लेकिन सदय लक्ष्मण उन्हें वन में जीवित ही छोड़ आते हैं और उन्हें मार डालने के सबूत के तौर पर एक हिरण का हृदय लेकर लौटते हैं।

राम और सीता का पुनर्मिलन भी भिन्न है। जब राम यह पाते हैं कि वह अभी भी जीवित हैं तो वे सीता को यह सूचना पहुंचा कर महल में वापस बुलवाते हैं कि उनका देहांत हो गया है। सीता उन्हें देखने के लिए भागी–भागी आती हैं, पर यह जान कर कि उनके साथ चालबाज़ी की गयी है, वे गुस्से से तिलमिला जाती हैं। निरुपाय क्रोध की झोंक में वे धरती माता का आह्वान करती हैं कि वह उन्हें अपने अंदर समा ले। हनुमान उन्हें भूमिगत प्रदेशों से वापस लाने के लिए जाते हैं, पर वे लौटने से इंकार कर देती हैं। फिर शिव की शक्ति से उनका पुनर्मिलन संभव हो पाता है।

पुनः, जैसा कि जैन दृष्टांतों और दक्षिण भारतीय लोक काव्यों में मिलता है, सीता के जन्म का वृत्तांत भी वाल्मीकि में दिये गये वृत्तांत से भिन्न है। जब दशरथ यज्ञ संपन्न करते हैं तो उन्हें एक कटोरा चावल मिलता है, खीर नहीं, जैसा कि वाल्मीकि के यहां ज़िक्र है। एक कौआ उसमें से कुछ दाने चुरा ले जाता है और रावण की पत्नी को देता है जो इसे खाकर सीता को जन्म देती है। रावण ने यह भविष्यवाणी सुन रखी है कि उनकी पुत्री ही उनकी मृत्यु का कारण बनेगी, इसलिए वह सीता को समुद्र में फिंकवा देते हैं जहां समुद्र की देवी उनकी रक्षा करती है और उन्हें जनक के पास ले जाती है।

यही नहीं, यद्यपि राम विष्णु के अवतार हैं, पर थाईलैंड में वे शिव के मातहत हैं। कमोबेश वे एक मानवीय नायक के रूप में देखे गये हैं, और *रामकीर्ति* को एक धार्मिक ग्रंथ नहीं माना जाता या ऐसा अनुकरणीय ग्रंथ भी नहीं माना जाता जिसके अनुरूप स्त्री–पुरुष अपने–आप को ढालें। थाई लोग सबसे अधिक सीताहरण और युद्ध के हिस्सों को पसंद करते हैं। अलगाव और पुनर्मिलन, जो कि हिंदू रामायणों का मर्मस्थल हैं, वहां उतने महत्वपूर्ण नहीं हैं जितने कि युद्ध, तकनीक, चमत्कारी अस्त्रों आदि के विवरण और उसका रोमांच। युद्धकांड किसी भी और वाचन के मुक़ाबले यहां अधिक विस्तृत है, जबकि कन्नड़ लोक वाचनों में यह बहुत कम अहमियत रखता है। देसाई कहते हैं कि युद्ध पर थाई लोगों का यह ज़ोर महत्वपूर्ण है : आरंभिक थाई इतिहास युद्धों से भरा पड़ा है; अस्तित्व–रक्षा उनकी [मुख्य] चिंता थी। *रामकियेन* के केंद्र में पारिवारिक मूल्य और अध्यात्म नहीं हैं। थाई श्रोता राम की अपेक्षा हनुमान को अधिक पसंद करते हैं। हिंदू रामायणों की तरह यहां हनुमान न तो ब्रह्मचारी हैं न ही भक्त, वे अच्छे–भले लेडीज़' मैन हैं, जो लंका के शयनकक्षों में झांकने में कोई संकोच नहीं करते और किसी और की सोती हुई पत्नी को देखना अनैतिक नहीं मानते, जैसा कि वाल्मीकि या कम्बन के हनुमान मानते हैं।

रावण भी यहां अलग हैं। *रामकीर्ति* में रावण की विदग्धता और विद्वत्ता की प्रशंसा की गयी है; उनके द्वारा सीता का हरण प्रेमवश किया गया कृत्य है और उसे सहानुभूति के साथ देखा गया है। रावण द्वारा एक स्त्री के लिए अपने परिवार, राज, और खुद अपने जीवन का बलिदान थाई लोगों को मार्मिक लगता है। मृत्यु के समय कहे गये उनके वचन आगे चल कर उन्नीसवीं सदी की एक प्रसिद्ध प्रेम कविता की थीम बनते हैं।[18] वाल्मीकि के चरित्रों से अलग थाई चरित्र अच्छे और बुरे का मानवीय मिश्रण हैं। यहां रावण का पराभव आपको उदास कर जाता है। यह निर्भ्रांत उल्लास का अवसर नहीं है, जैसा कि वाल्मीकि में है।

अंतरों के पैटर्न

इस तरह, हमारे पास वाल्मीकि द्वारा संस्कृत में कही गयी एक कथा ही नहीं है, दूसरों द्वारा कही गयी अनेकों राम कथाएं हैं जिनके बीच ख़ासे बड़े अंतर मौजूद हैं। अब मैं कुछ ऐसे अंतरों की रूपरेखा प्रस्तुत करूंगा जिनसे हम अभी तक रू–ब–रू नहीं हुए हैं। मिसाल के लिए, संस्कृत में और दूसरी भारतीय भाषाओं में कथा के दो तरह के समापन हैं। एक समापन वह है जहां राम और सीता अपनी राजधानी अयोध्या लौट आते हैं, जहां इस आदर्श राज्य के राजा और रानी के रूप में उनका राज्याभिषेक होता है। दूसरा समापन, जिसे अक्सर वाल्मीकि और कम्बन में परवर्ती प्रक्षेप माना जाता है, वह है जहां रावण के उपवन में रहने वाली स्त्री के रूप में सीता के बारे में राम मिथ्यापवाद सुनते हैं, और राजा के रूप में अपनी प्रतिष्ठा (शायद हमें इसे साख कहना चाहिए) के नाम पर वे सीता को वन में निर्वासित कर देते हैं, जहां वे जुड़वां बच्चों को जन्म देती हैं। वे वाल्मीकि के आश्रम में पलते–बढ़ते हैं, *रामायण* के साथ–साथ उनसे युद्धकला भी सीखते हैं, राम की सेना से एक युद्ध जीतते हैं, और एक मार्मिक दृश्य में अपने पिता को, जो यह जानता भी नहीं कि ये कौन हैं, *रामायण* गाकर सुनाते हैं। ये दोनों अलग–अलग समापन पूरी कृति को एक भिन्न रंगत दे देते हैं। पहला समापन राजसी निर्वासितों की वापसी का जश्न मनाता है और पुनर्मिलन, राज्याभिषेक तथा शांति–स्थापना के साथ कथा को समेट लेता है। दूसरे में, उनका सुख क्षणभंगुर है, और वे दुबारा जुदा हो जाते हैं, जिससे प्रिय का वियोग या विप्रलंभ पूरी कृति का केंद्रीय मनोभाव [अंगी रस] बन जाता है। यहां तक कि इसे दुखांत भी कहा जा सकता है, क्योंकि सीता इसे और सहन नहीं कर पाती और धरती के एक विवर में समा जाती है, वही धरती जो उसकी माता है, जिसमें से वह निकली थी – जैसा कि हमने पहले देखा है, उसके नाम का अर्थ है 'हलरेखा', वही जगह जहां जनक ने उसे सबसे पहले पाया था। हलरेखा से सीता की उत्पत्ति और धरती में उसकी वापसी एक वनस्पति–चक्र को भी दिखलाती है : सीता बीज के समान हैं और अपने मेघ–श्यामल शरीर के साथ राम वर्षा के समान हैं; दक्षिण में स्थित रावण अंधकारपूर्ण प्रदेशों में ले जाने वाला अपहर्ता है (दक्षिण दिशा में मृत्यु का वास है); धरती में वापस लौटने से पहले सीता थोड़े समय के लिए शुचिता और गरिमा के साथ प्रकट होती है। ऐसे मिथक को किसी कठोर रूपक/प्रतीक कथा में सीधे–सीधे ढालने की कोशिश तो नहीं करनी चाहिए, पर वह कई ब्यौरों के साथ कथा की छायाओं में अनुगूंजित होता है। उर्वरता और वर्षा के बहुतेरे हवाले, शिव जैसे योगी व्यक्ति का राम द्वारा प्रतिवाद (जिसे कम्बन ने अहिल्या की कथा में बहुत स्पष्ट कर दिया है), उनके पुरखे द्वारा अपने साम्राज्य की धरती पर गंगा नदी को उतार लाना ताकि मृतक के भस्मों का तर्पण और पुनरुज्जीवन किया जा सके – इन सब पर ग़ौर करें। ऋष्यशृंग की कथा भी प्रासंगिक है। वह काम के मामले में एक भोलाभाला योगी है जो एक स्त्री के द्वारा कामातुर बनाये जाने पर लोमपद राज्य पर वर्षा कर देता है, और जो बाद में चल कर दशरथ की रानियों के गर्भ को भरने के अनुष्ठान को संपन्न कराता है। इस तरह का मिथकीय अर्थ–विस्तार हमें प्रकृति के अनवरत हवालों, राम द्वारा सीता की खोज के दौरान उनके समर्पित मित्रों की तरह पक्षियों और जानवरों की प्रभावशाली उपस्थिति में भी दूसरे सुर सुनने पर बाध्य करता है। वाल्मीकि *रामायण* में पक्षी और वानर एक वास्तविक उपस्थिति और एक काव्यात्मक आवश्यकता हैं, उसी हद तक जिस हद तक जैन मत में वे अपवृद्धि हैं। हर समापन के साथ कथा के भिन्न प्रभावों को उभारा जाता है और पूरा वाचन कथा की काव्यात्मक भंगिमा को बदल देता है।

अलग–अलग तरह की शुरुआतों के बारे में भी ऐसी ही बातें कही जा सकती हैं। वाल्मीकि स्वयं वाल्मीकि के बारे में एक कहानी कहने से शुरुआत करते हैं। वे एक शिकारी को देखते हैं जो निशाना साध कर पक्षियों के एक आनंदित प्रेमीयुगल में से एक को मार गिराता है। मादा अपने मृत साथी के चारों ओर चक्कर लगाने लगती है और चीत्कार करती है। यह दृश्य कवि और महर्षि वाल्मीकि को इतना द्रवित कर जाता है कि वे शिकारी को शाप देते हैं। क्षण भर बाद वे महसूस करते हैं कि उनके शाप ने श्लोक की एक पंक्ति का रूप ले लिया है – शब्दों का यह खेल सुप्रसिद्ध है कि उनके *शोक* की लय ने *श्लोक* को जन्म दिया है। वे उसी छंद में राम के कृत्यों पर पूरा महाकाव्य लिखने का फ़ैसला करते हैं। यह घटना परवर्ती काव्यशास्त्र में सभी काव्यात्मक उक्तियों के लिए एक दृष्टांत बन जाती है : स्वाभाविक भावों के दबाव में कोई कलात्मक रूप पाया या गढ़ा जाता है, एक ऐसा रूप जो उस भाव के सारतत्व (रस) को पकड़ता और साधारणीकृत करता है। वाल्मीकि की कृति के आरंभ में ही आने वाली यह घटना उस कृति को एक सौंदर्यात्मक आत्मसजगता प्रदान करती है। इस दिशा में और भी सोचा जा सकता है : एक पक्षी की मृत्यु और प्रेमी के वियोग की घटना रामकथा के इस वाचन की विशिष्ट स्वरलहरी बन जाती है। कई महत्वपूर्ण अवसरों पर एक प्राणी के मारे जाने की घटना जिस ख़ास लयात्मक तरीके से दोहराई गयी है, उस पर ग़ौर करें : जब दशरथ हाथी की सोच कर तीर चलाते हैं और उससे घड़े में पानी भरता एक युवा तपस्वी मारा जाता है (पानी भरने की आवाज़ वैसी ही थी जैसी किसी कुंड से हाथी के पानी पीने की आवाज़), तो उन्हें शाप मिलता है जिसके चलते आगे चल कर राम का निर्वासन और पिता पुत्र का बिछोह होता है। जब राम एक चमत्कारी स्वर्णमृग का पीछा करते हैं (जो छद्मवेश में एक राक्षस है) और उसे मार देते हैं, तो वह अपनी आख़िरी सांसों के बीच राम की आवाज़ में लक्ष्मण को पुकारता है, जिसकी वजह से वह सीता की सुरक्षा का काम छोड़ कर वहां से जाते हैं; इसी के चलते रावण को सीताहरण का मौक़ा मिलता है। रावण जब उन्हें लेकर भाग रहे हैं, तब भी एक प्राचीन पक्षी [जटायु] उन्हें रोकने की कोशिश करता है जिसे वे अपने खड्ग से मार गिराते हैं। इन सबके अलावा, शुरुआती हिस्से में एक पक्षी की मृत्यु और उसके जीवित साथी की चीत्कार पूरी कृति में आने वाली अनेक जुदाइयों – भाई और भाई के, माताओं और पिताओं और पुत्रों के, पत्नियों और पतियों के वियोगों – का स्वर नियत कर देती है।

इस तरह प्रत्येक महत्वपूर्ण कृति का शुरुआती हिस्सा आगे के प्रतिपाद्यों का और छवियों के एक पैटर्न का पूर्वाभास देते हुए पूरे काव्य की सामंजस्यपूर्ण–सुसंगत स्वरयोजना क्रियान्वित कर देता है। कम्बन का तमिल काव्य बहुत अलग तरह से शुरू होता है। इसके कुछ अनुच्छेदों को देखने से बात स्पष्ट होगी।

नदी

भभूत में लिपटे शिव के रंग वाला (सफ़ेद) मेघ आकाश को अलंकृत करता हुआ जाकर समुद्र को पीता है और लौटते हुए उसका रंग अगरु का लेप धारण करने वाले स्तनों की श्रीदेवी को अपने वक्ष में धारण करने वाले (विष्णु) के रंग का सा हो जाता है। (2)

उदार दाता की तरह मेघ मोटी–मोटी धारें गिराते हैं। वे धारें मानो चांदी की तारें हैं जिनको मेघ स्वर्ण के समान दिखते श्रेष्ठ पर्वत (हिमालय) पर लटका कर उसे बांधने का प्रयास करते हैं। (15)

(सरयू का प्रवाह प्रदेश में) प्रतिष्ठित, धर्मावलंबी और मनुनीति पर चलने वाले शीतल–छत्र–धारी राजा के यश के समान फैलता है और चतुर्वेदी ब्राह्मण को दान देने पर दाता को मिलने वाले शुभ फल के समान बढ़ता है। (16)

वह बाढ़ वेश्या का–सा बरताव करती है। वेश्या पुरुष के सिर का, शरीर का आलिंगन करती है, पैरों तले भी लगती है। एक क्षण के लिए उसका प्रेम स्थिर जैसा दिखता है, पर वह चंचल है और धोखा देकर उसका सारा धन लूट लेती है। उस पुरुष जैसा ही हाल पर्वत का है। (वेश्या–सदृश) धारा पर्वत की सारी वस्तुएं बहा ले जाती है। (17)

रत्न, स्वर्ण, मयूर–पंख, हाथी दांत, अगरु और चंदन की लकड़ियां – ऐसी और चीज़ों को बहा ले जाने वाला प्रवाह कारवां लेकर चलने वाले व्यापारी के समान है। (18)

उस प्रवाह में फूल तैरते हैं; पराग, शहद, चोखे स्वर्ण, गजों का मद–जल आदि मिले आते हैं। उनके विविध रंगों के कारण वह प्रवाह इंद्रधनुष के समान दिखायी देता है। (19)

वह प्रवाह चट्टानों को और वृक्षों को उखाड़ लाता है; उस पर पत्ते वगैरह बहते आते हैं। उसको देख कर समुद्र पर सेतु बनाने में लगी वानर–सेना याद आती है। (20)

उस प्रवाह की सज–धज देख कर ऐसा लगता है कि समुद्र से लड़ने जा रही सेना हो। विशाल मुख वाले मत्त हाथियों और अश्व–दलों के साथ वातावरण में युद्ध का शोर भरते हुए, लताओं के रूप में ध्वजाएं लहराते हुए यह प्रवाह आगे बढ़ता है। (22)

सरयू का जल–तल विशाल है; उसकी धारा अविच्छिन्न है और पवित्र है। इन बातों में सरयू नदी रवि–कुल के राजाओं के सदाचरण की समता करती है। और वह जन–समाज के लिए मातृ–सृजन के समान जीवनदायिनी और जीव–वर्द्धक है। (23)

दही, दूध, मक्खन आदि छींकों के साथ हर लेना, तरुओं को उखाड़ना, गोपियों के कंकणों और वस्त्रों का हरण – ये सब काम, कालीय नाग के सिर पर नृत्य करने वाले श्रीकृष्ण के समान, सरयू नदी भी करती है। (26)

वन को पर्वत–प्रदेश, खेतों को वन–प्रदेश, सागर–तट को उर्वर भूमि बनाती, सीमाओं को बदलती और भूदृश्यों को स्थानांतरित करती नदी की गति कर्म–गति के समान है जिसके कारण जीव विविध योनियों में अटूट क्रम से जन्म लेते हैं और वहां भी कर्म के अनुसार ही पाप या पुण्य करते हैं। (28)

हिमालय की चट्टानों में जन्म लेकर समुद्र में जा मिलने वाली यह नदी अनेक धाराओं में बंट जाती है, उस ईश्वर–तत्व के समान जो आदि में एक ही है, किंतु अनंतर विविध धर्मों के देवताओं के रूप में अनेक हो गया। (30)

जिस प्रकार जीव अनेक प्रकार के शरीरों में व्याप्त होता और फिर उसे रिक्त कर जाता है, उसी प्रकार सरयू नदी का जल पराग चूते उपवनों और चंपावनों से होकर, कलियां खिलाते जलाशयों में नया बालू भरता हुआ, माधवी लता से घिरे सुपारी के वनों से होकर गुजरता है। (31)[19]

यह हिस्सा कम्बन में ही है; वाल्मीकि के यहां यह नहीं मिलता। यहां बताया गया है कि पानी किस तरह समुद्र से बादलों के द्वारा संकलित किया जाता है और बारिश के रूप में नीचे आता है और सरयू नदी की बाढ़ के रूप में रामराज्य की राजधानी, अयोध्या की ओर प्रवाहित होता है। इसके माध्यम से कम्बन अपने सारे प्रतिपाद्यों और बलाघातों की, यहां तक कि अपने चरित्रों, उर्वरता की थीम के प्रति अपने सरोकार (जो कि वाल्मीकि में प्रच्छन्न है), राम के पुरखों के पूरे वंश, और रामायण के माध्यम से प्रकट होने वाले भक्ति के अपने दर्शन, की प्रस्तावना कर देते हैं।

उपमाओं और संकेतों के ज़रिये विषयवस्तुओं की जिस विविधता को सामने लाया गया है, उस पर ग़ौर करें। यहां पानी से जुड़ी हर बात स्वयं रामायण की कथा के किसी पहलू का प्रतीक है और रामायण की सृष्टि के किसी अंश का प्रतिनिधित्व करती है (मिसाल के लिए, वानर)। आगे बढ़ते हुए यह [जल–प्रवाह / जल–प्रवाह का

वर्णन] उन ख़ास–ख़ास तमिल परंपराओं को उभारता चलता है जो कहीं और नहीं पायी जाती हैं, जैसे क्लासिकी तमिल काव्य के पांच भूदृश्य। खुद पानी, जो कि जीवन और उर्वरता का स्रोत है, पर ज़ोर तमिल साहित्यिक परंपरा का एक सुनिश्चित अंग है।

रामायणों के बीच अंतर का एक दूसरा बिंदु है, किसी महत्वपूर्ण चरित्र पर फ़ोकस करने की सघनता का अंतर। वाल्मीकि अपने आरंभिक हिस्सों में राम और उनके इतिहास पर केंद्रित हैं; विमलसूरि की जैन रामायण और थाई भाषा का महाकाव्य राम पर नहीं बल्कि रावण की वंशावलि और उसके कारनामों पर एकाग्र होते हैं; कन्नड़ के ग्रामीण वाचन सीता पर, उनके जन्म, उनके विवाह, उनकी परीक्षाओं पर एकाग्र होते हैं। *अद्भुत रामायण* और तमिल *शतकंठवन* जैसी कुछ बाद की कृतियां सीता को एक नायकोचित चरित्र तक बना देती हैं : जब दस सिर वाला रावण मार दिया जाता है तो एक दूसरा सौ सिर वाला रावण प्रकट होता है; राम इस नयी मुसीबत का सामना नहीं कर सकते, इसलिए सीता ही युद्ध करने जाती हैं और इस नये दानव का वध करती हैं।[20] अपनी सुविस्तृत मौखिक परंपरा के लिए सुविदित संथाल लोग तो सीता को व्यभिचारिणी के रूप में प्रस्तुत करते हैं – वाल्मीकि और कम्बन को पढ़ने वाले किसी भी हिंदू के लिए यह सदमे और ख़ौफ़ का विषय होगा कि यहां सीता का शीलभंग रावण और लक्ष्मण दोनों के द्वारा किया जाता है। दक्षिणपूर्व एशिया के पाठों में, जैसा कि हमने पहले देखा है, हनुमान वानर मुख वाले एक ब्रह्मचारी भक्त नहीं बल्कि एक लेडीज' मैन हैं जो अनेक प्रेमप्रसंगों में दिखते हैं। कम्बन और तुलसी के यहां राम ईश्वर हैं; जैन पाठों में वे मात्र एक उन्नत जैन पुरुष हैं जो अपने आख़िरी जन्म में है और इसीलिए रावण का वध भी नहीं करता। यहां रावण एक कुलीन नायक हैं जिन्हें अपने कर्म के चलते सीता के प्यार में पड़ना और अपनी मौत बुलाना बदा है, जबकि दूसरे पाठों में वे एक उद्धत राक्षस हैं। इस तरह हर महत्वपूर्ण चरित्र की संकल्पना में आमूल अंतर हैं, ऐसे अंतर कि कोई एक संकल्पना उन लोगों के लिए जुगुप्साजनक हो सकती है जो किसी दूसरी संकल्पना को धारण करते हैं। हम इसमें और भी बहुत कुछ जोड़ सकते हैं : सीता के निर्वासन के कारणों की व्याख्या, सीता के दूसरे पुत्र की चमत्कारिक सृष्टि, और राम और सीता का अंतिम पुनर्मिलन। इनमें से प्रत्येक एकाधिक प्रदेशों में, एकाधिक पाठीय समुदायों (हिंदू, जैन या बौद्ध) में, एकाधिक पाठों में आता है।

तो क्या राम, उसके भाई, उसकी पत्नी और उसके शत्रु (रावण) इत्यादि के संबंधों की मात्र तालिका के अलावा भी राम की कथाओं में कोई सामान्य (कॉमन / साझा) बीजभाग है? क्या ये कथाएं कुछ कौटुम्बिक समानताओं के द्वारा ही आपस में जुड़ी हैं, जैसा कि शायद विटगेंस्टाइन कहते? या कि यह अरस्तू की आरी की तरह है? अरस्तू ने जब एक बूढ़े बढ़ई से पूछा कि उसकी आरी कितनी पुरानी है, तो बढ़ई ने कहा, ''अरे, यह तीस सालों से मेरे पास है। कुछ दफ़ा मैंने इसका ब्लेड बदला है और कुछ दफ़ा इसकी मूठ बदली है। लेकिन आरी वही है।'' संबंधों की संरचना की एक तरह की प्रतिच्छाया इन सभी वाचनों को रामायण का नाम मुहैया करा देती है, लेकिन निकट से देखने पर ज़रूरी नहीं कि कोई एक कथा दूसरी कथा जैसी दिखे। समान व्यक्तिवाचक नामों वाले लोगों के एक समुच्चय की तरह वे अपने नाम में ही एक वर्ग बन जाते हैं।

अनुवाद पर विचार

हो सकता है, यह बात को रखने का एक अतिवादी तरीका हो। लिहाज़ा, थोड़ा पीछे हट कर मैं इसे अलग तरीके से कहूं, एक ऐसे तरीके से जो पाठों के बीच के अंतरों और उनके आपसी संबंधों को अधिक समुचित रूप में समेटता हो; [जी हां, संबंधों को भी,] क्योंकि वे संबंधित तो हैं ही। उन्हें अनुवादों की एक ऐसी शृंखला के रूप में सोचा जा सकता है जो पाठों के एक कुटुंब में एक या दूसरे के इर्द–गिर्द झुंड बनाते हैं : उनमें से कई–एक वाल्मीकि के आसपास इकट्ठा होते हैं, कई अन्य जैन विमलसूरि के इर्द–गिर्द इकट्ठा होते हैं, और इसी तरह और उदाहरण दिखते हैं।

या पाठों के बीच के इन अनुवाद–संबंधों पर पीयर्स की शब्दावली में, कम–से–कम तीन तरह से विचार किया जा सकता है।

जहां पाठ 1 और पाठ 2 के बीच एक ज्यामितीय समानता है, जैसे दो त्रिभुजों के बीच होती है (कोण, और रेखाओं के रंग जो भी हों), उस संबंध को हम 'आइकॉनिक' कहते हैं।[21] पश्चिम में, हम सामान्यतः अनुवादों से निष्ठावान, यानी आइकॉनिक होने की अपेक्षा रखते हैं। लिहाज़ा, जब चैपमैन होमर का अनुवाद करते हैं तो वे न सिर्फ़ चरित्र, बिंबविधान और घटनाओं के क्रम जैसी बुनियादी पाठीय विशेषताओं को सुरक्षित रखते हैं, बल्कि षट्पदी को पुनरुत्पादित करने और मूल ग्रीक पाठ में जितनी संख्या में पंक्तियां हैं, उतनी ही पंक्तियां रखने की भी कोशिश करते हैं – सिर्फ़ भाषा अंग्रेज़ी और मुहावरे एलिज़ाबेथीय हैं। जब कम्बन वाल्मीकि की *रामायण* का तमिल में पुनर्वाचन करते हैं तो वे प्रसंगों की व्यवस्था और क्रम तथा पिता, पुत्र, भाइयों, पत्नियों, मित्रों और शत्रुओं के बीच के संरचनात्मक संबंधों का निर्वाह करने में कमोबेश निष्ठावान हैं। लेकिन 'आइकॉनिकता' इस तरह के संरचनात्मक संबंधों तक ही सीमित है। मसलन, उनकी कृति वाल्मीकि की कृति से कहीं बृहदाकार है, और तमिल छंदों के बीस से भी ज़्यादा प्रकारों में लिखी गयी है, जबकि वाल्मीकि की *रामायण* अधिकांशतः श्लोकों में है।

अक्सर ये होता है कि यद्यपि पाठ 2 प्लॉट जैसे बुनियादी तत्वों के मामले में पाठ 1 के साथ आइकॉनिक संबंध बनाता है, पर उसमें स्थानीय ब्यौरे, लोकगीत, काव्यात्मक परंपराएं, बिंबविधान और ऐसी अन्य चीज़ें भरपूर होती हैं – कम्बन के वाचन या बंगाली *कृत्तिवास* के वाचन में ऐसा ही है। बंगाली रामायण में राम का विवाह बिल्कुल एक बंगाली विवाह है जिसमें बंगाली रीति–रिवाज और खान–पान शामिल हैं।[22] इस तरह के पाठ को हम 'इंडेक्सिकल' कह सकते हैं : पाठ एक स्थान विशेष में, एक संदर्भ में धंसा हुआ है, उसका हवाला देता है, यहां तक कि उसे व्यक्त करता है, और उसके बगैर बहुत अर्थवान नहीं हो पाता। कहा जा सकता है कि यहां रामायण सिर्फ़ अलग–अलग पाठों का एक सेट नहीं है, बल्कि विविध क़िस्म के दृष्टांतों वाली एक विधा है।

कई बार, जैसा कि हमने देखा है, पाठ 2 पाठ 1 के प्लॉट और चरित्रों और नामों का न्यूनतम उपयोग करता है और उन्हें बिल्कुल नयी चीज़ कहने के लिए इस्तेमाल करता है, जिसमें प्रायः एक प्रतिपाठ रचते हुए अपने पूर्ववर्ती के पाठ को सब्वर्ट करने / उलट देने का प्रयास होता है। हम ऐसे अनुवाद को 'सिंबॉलिक' कह सकते हैं। खुद *अनुवाद* शब्द यहां किसी हद तक एक गणितीय आशय ग्रहण कर लेता है, दूसरे तल या दूसरी प्रतीक–व्यवस्था पर संबंधों की एक संरचना के मानचित्रण [अंकन] का आशय। जहां ऐसा हुआ है, वहां रामकथा पूरे सांस्कृतिक क्षेत्र की एक लगभग द्वितीय भाषा बन गयी है – एक कथा–भाषा के साथ नामों, चरित्रों, घटनाओं और अभिप्रायों का एक साझा बीजभाग जिसमें पाठ 1 एक चीज़ कहता है और पाठ 2 दूसरी, यहां तक कि ठीक उलट, चीज़ कहता है। भारत में वाल्मीकि का हिंदू पाठ और विमलसूरि का जैन पाठ, या दक्षिणपूर्व एशिया में थाई भाषा की *रामकीर्ति,* एक दूसरे के ऐसे ही सिंबॉलिक अनुवाद हैं।

यह नहीं भूलना चाहिए कि कुछ हद तक सभी अनुवादों में, यहां तक कि तथाकथित निष्ठावान आइकॉनिक अनुवादों में भी, तीनों तरह के तत्व अनिवार्यतः रहते हैं। जब गोल्डमान और उनके समूह के विद्वान वाल्मीकि के रामायण का एक आधुनिक अनुवाद प्रस्तुत करते हैं तो वे संस्कृत नामों के लिप्यंतरण, श्लोकों की संख्या और क्रम, प्रसंगों की क्रम–व्यवस्था और इसी तरह की और चीज़ों के मामले में आइकॉनिक हैं।[23] लेकिन इस मायने में वे इंडेक्सिकल भी हैं कि वह अनुवाद अंग्रेज़ी मुहावरे में है और भूमिकाओं तथा व्याख्यात्मक टिप्पणियों से लैस होकर आता है, जो कि अवश्यंभावी रूप से बीसवीं सदी के रवैयों और व्यतिक्रमों को धारण करते हैं; और इस मायने में सिंबॉलिक भी हैं कि वे (अनुवादक) अपने अनुवाद के द्वारा पाठ की अपनी पढ़त के अनुकूल ठहरने वाली आधुनिक समझों को संप्रेषित करने से बाज नहीं आ सकते। लेकिन इन तीन तरह के संबंधों के बीच का अनुपात कम्बन और गोल्डमान में काफ़ी अलग–अलग है। और इसीलिए हम उन्हें भिन्न कारणों से तथा भिन्न सौंदर्यात्मक अपेक्षाओं के साथ पढ़ते हैं। हम विद्वज्जनोचित आधुनिक अंग्रेज़ी अनुवाद को कमोबेश मूल वाल्मीकि का एक अहसास पाने के लिए पढ़ते हैं, और वह जिस हद तक वह मूल से समानता रखता है, उस हद तक हम उसे सफल मानते हैं। कम्बन को हम कम्बन के लिए पढ़ते हैं, और उनकी शर्तों पर ही उनके बारे में फ़ैसला करते हैं – वाल्मीकि साथ उनकी समानता के आधार पर नहीं बल्कि, अगर कोई आधार हो सकता है तो, इस आधार पर कि वे वाल्मीकि से किस हद

तक अलग जा पाते हैं। एक जगह हम समानता से आनंदित होते हैं, दूसरी जगह हम भिन्नता में स्वाद और रस लेते हैं।

थोड़ा और आगे बढ़ते हुए कहा जा सकता है कि जिन सांस्कृतिक इलाक़ों में रामायण जातीय स्तर पर मौजूद हैं, वहां प्लॉटों, चरित्रों, नामों, भूगोल, घटनाओं और संबंधों को शामिल करते हुए संकेतकों की एक सामूहिक निधि है। मौखिक, लिखित और प्रदर्शनसंबंधी परंपराएं, मुहावरे, कहावतें और यहां तक कि व्यंग्योक्तियां भी रामकथा को इंगित करने वाले संकेतों का वहन करती हैं। जब कोई लगातार बोलता जाता है, तो आप कहते हैं, ''अब ये क्या रामायण लगा रखी है? बहुत हुआ।'' तमिल में किसी संकरे कमरे को किष्किंधा कहते हैं; किसी मंदबुद्धि व्यक्ति के बारे में कहावत चलती है, ''पूरी रात रामायण सुनने के बाद ये पूछता है सीता किसकी बीवी थी''; बंगाली की एक गणित पाठ्यपुस्तक में बच्चों से कहा गया है कि जब नटखट हनुमान अपनी बनायी हुई दीवार का एक हिस्सा तोड़ देते हैं तब बची हुई दीवार की लंबाई–चौड़ाई क्या है, बतायें। इन सबके साथ विवाह गीतों, आख्यानमूलक काव्यों, स्थानसंबंधी दंतकथाओं, मंदिरों से संबंधित मिथकों, चित्रकारी, शिल्प तथा बहुतेरी प्रदर्शनकारी कलाओं को भी शामिल किया ही जाना चाहिए।

ये विभिन्न पाठ न सिर्फ़ पूर्ववर्ती पाठों से, कुछ लेते या कुछ ख़ारिज करते, सीधे–सीधे संबद्ध हैं, बल्कि वे एक–दूसरे से भी इस साझा कोड या साझा सामूहिक निधि के ज़रिये संबद्ध हैं। हर सर्जक सामूहिक निधि के इस सरोवर में डुबकी मारता है और एक अलग तरह का सम्मिश्रण निकाल लाता है, अनोखे टेक्स्चर और ताज़ातरीन संदर्भ के साथ एक नया पाठ। महान पाठ मामूली पाठों का दुबारा इस्तेमाल करते हैं, क्योंकि, जैसा कि वैलेरी ने कहा है, 'शेर भेड़ों से बनते हैं'। और भेड़ें भी शेरों से बनती हैं : एक लोक दंतकथा में बताया गया है कि हनुमान ने महान युद्ध के बाद एक पहाड़ की चोटी पर मूल रामायण लिखी और पांडुलिपि को बिखेर दिया; वह उस रामायण से बहुत बड़ी थी जो आज हमें उपलब्ध है। कहते हैं कि वाल्मीकि उसका बस एक टुकड़ा ही पा सके। इस अर्थ में, कोई भी पाठ मूल नहीं है, तथापि कोई भी वाचन महज़ पुनर्वाचन नहीं है – और कथा कहीं भी समाप्त नहीं होती, भले ही पाठों के अंदर उसे समाप्त किया जाता हो। भारत और दक्षिणपूर्व एशिया में कोई भी कभी पहली बार रामायण या महाभारत नहीं पढ़ता। ये कथाएं वहां 'ऑलवेज़ ऑलरेडी' [हर समय पहले से मौजूद] हैं।

क्या होता है जब आप कथा सुनते हैं

यह निबंध अनेक रामायणों से संबंधित एक लोककथा के साथ शुरू हुआ था। समाप्त करने से पहले हनुमान और राम की अंगूठी के बारे में एक और कथा सुनाना उपयुक्त होगा।[24] लेकिन यह कथा रामायण की शक्ति के बारे में है, इस बारे में कि जब आप ध्यानपूर्वक इस अर्थगर्भित कथा को सुनते हैं तो क्या होता है। एक मूर्ख भी इसके प्रभाव से बच नहीं सकता; वह आत्मविस्मृत हो जाता है और कथा के घटनाक्रम की गिरफ़्त में आ जाता है। श्रोता तमाशबीन नहीं रह पाता, वह महाकाव्य के संसार में घुसने के लिए विवश हो जाता है: क़िस्से और असलियत के बीच की रेखा मिट जाती है।

एक गंवार आदमी था जिसे संस्कृति की कोई समझ नहीं थी और न ही संस्कृति में दिलचस्पी थी। उसकी शादी एक बहुत सुसंस्कृत स्त्री से हो गयी। स्त्री ने जीवन के उच्चतर पक्षों को लेकर उसकी आस्वाद–क्षमता विकसित करने के लिए कई तरीके अपनाये लेकिन उसकी इनमें कतई दिलचस्पी नहीं थी।

एक दिन एक बड़े रामायणी उसके गांव में आये। हर शाम वे रामायण महाकाव्य को गाकर सुनाते और उसके श्लोकों की व्याख्या करते। पूरा गांव इस एक आदमी के प्रदर्शन को देखने–सुनने ऐसे जाता जैसे कोई दुर्लभ भोज हो।

उस संस्कृतिविहीन मूर्ख के साथ ब्याही हुई स्त्री ने कोशिश की कि उस प्रदर्शन में उसकी दिलचस्पी जगायी जाये। वहां जाने और सुनने के लिए स्त्री ने उसका बहुत सिर खाया। एक बार भुनभुनाने के बावजूद उसने बीवी का मन रखने का फ़ैसला किया। सो, वह शाम में वहां गया और पीछे की ओर बैठ गया। यह पूरी रात चलने वाला

प्रदर्शन था, इसलिए वह जगा नहीं रह पाया। पूरी रात वह सोता रहा। अलस्सुबह, जब एक सर्ग समाप्त हुआ और रामायणी ने उस दिन के लिए समापन वाले श्लोक पढ़े, तो रीति के अनुसार मिठाइयां बंटीं। किसी ने सोते हुए आदमी के मुंह में मिठाई ठूंस दी। वह सोते से उठ गया और अपने घर चला गया। उसकी पत्नी बहुत आनंदमग्न थी कि पतिदेव रात भर वहां टिके रहे। उसने उत्सुकतापूर्वक पूछा कि रामायण में उसे कितना मज़ा आया। पति ने कहा, ''बहुत मधुर था।'' पत्नी यह सुन कर खुश हुई।

पत्नी ने अगले दिन भी महाकाव्य को सुनने के लिए उस पर ज़ोर डाला। सो, वह उस तंबू–कनात के भीतर गया जहां रामायणी का प्रदर्शन चल रहा था, एक दीवार से टिक कर बैठा और पलक झपकते सो गया। भीड़ बहुत थी। एक छोटा लड़का उसके कंधे पर बैठ गया, खुद को अच्छी तरह जमा कर वह मुंह बाये हुए उस मंत्रमुग्धकारी कथा को सुनता रहा। सुबह, जब कथा का उस रात का हिस्सा ख़त्म हुआ तो सभी लोग उठ गये और वह आदमी भी उठ गया। लड़का पहले ही चला गया था, लेकिन रात भर उसका भार ढोने के चलते उस आदमी को बदन में दर्द महसूस हो रहा था। जब वह घर गया और पत्नी ने उत्सुकतापूर्वक पूछा कि कैसा रहा, तो बोला, ''सुबह होते–होते बहुत भारी हो गया।'' पत्नी ने कहा, ''ऐसी ही कथा है ये।'' वह खुश थी कि अंततः उसका पति महाकाव्य की भावनाओं और महानता को महसूस करने लगा है।

तीसरे दिन वह भीड़ से किनारे होकर बैठा। इतना उनींदा था कि ज़मीन पर ही लेट गया और खर्राटे तक मारने लगा। सुबह–सुबह एक कुत्ता उसके मुंह में पेशाब कर गया। इसके बाद वह उठा और घर चला गया। उसकी पत्नी ने पूछा कि कैसा रहा। उसने इधर–उधर मुंह घुमाया, थोड़ा चेहरा बनाया और कहा, 'भयंकर। बहुत नमकीन था।' उसकी पत्नी को लगा कि कुछ गड़बड़ है। उसने पति से कहा कि ठीक–ठीक बताये, चल क्या रहा है और तब तक नहीं छोड़ा जब तक उसने बता नहीं दिया कि वह रात कथा के दौरान सोता रहा है।

चौथे दिन उसकी पत्नी उसके साथ गयी, उसे पहली कतार में बिठाया और सख़्ती से कहा कि कुछ भी हो जाये, उसे जगे रहना है। सो, वह पहली कतार में मुस्तैदी से बैठ कर कथा सुनने लगा। शीघ्र ही वह इस महान कथा के कारनामों और चरित्रों की गिरफ़्त में आ गया। उस दिन रामायणी इस वर्णन के साथ श्रोताओं को सम्मोहित कर रहे थे कि किस तरह हनुमान को राम की निशानी वाली अंगूठी सीता के सामने पेश करने के लिए समुद्र को छलांगना पड़ा। जब हनुमान समुद्र पार कर रहे थे तो निशानी वाली अंगूठी उनके हाथ से फिसल कर समुद्र में गिर गयी। हनुमान को पता नहीं था कि क्या करें। उन्हें अंगूठी जल्दी से हासिल करनी थी और सीता के पास ले जाना था। वे अपने हाथ मल रहे थे कि वह पति जो पहली कतार में बैठ कर पूरे ध्यान से सुन रहा था, बोला, ''हनुमान, चिंता न करो। मैं इसे लाऊंगा।'' इसके बाद वह समुद्र में कूद गया, समुद्र के तल में अंगूठी की खोज की, उसे वापस ले आया और उसे हनुमान को सौंप दिया।

सभी लोग आश्चर्यचकित थे। सबने सोचा कि यह राम और हनुमान का आशीर्वाद पाया हुआ कोई विशिष्ट व्यक्ति है। तब से वह अपने गांव में एक समझदार बुजुर्ग की तरह प्रतिष्ठित है, और उसने इस प्रतिष्ठा के अनुरूप ही व्यवहार किया है। जब आप ध्यानपूर्वक एक कथा को सुनते हैं, ख़ास तौर से रामायण को, तब ऐसा ही होता है।

संदर्भ और टिप्पणियां

यह पर्चा मूलतः फरवरी 1987 में पिट्सबर्ग यूनिवर्सिटी में सभ्यताओं की तुलना के मुद्दे पर आयोजित सम्मेलन के लिए लिखा गया था। इसे लिखने और प्रस्तुत करने का अवसर प्रदान करने के लिए मैं सम्मेलन के आयोजकों का आभारी हूं और साथ ही अनेक सहकर्मियों, ख़ास तौर से वी. नारायण राव, डेविड शुलमैन और पाउला रिचमैन का आभारी हूं जिन्होंने पर्चे पर टिप्पणी की।

1 इस लोककथा के लिए मैं यूनिवर्सिटी ऑफ़ विस्कॉन्सिन के श्री किरिन नारायण का ऋणी हूं।

2 दक्षिण और दक्षिणपूर्व एशिया की अनेकों रामायणों पर पिछले कुछ सालों में कई कार्य और निबंध–संकलन सामने आये हैं। मैं यहां उनमें से कुछ का ही नामोल्लेख करूंगा जो मेरे लिए प्रत्यक्षतः उपयोगी रहे हैं : असित कु. बनर्जी, संपा., *द रामायणा इन ईस्टर्न इंडिया* (कलकत्ताः प्रांजा, 1983); पी. बनर्जी, *रामा इन इंडियन लिटरेचर, आर्ट ऐंड थॉट*, 2 खंड (दिल्लीः संदीप प्रकाशन, 1986); जे. एल. ब्रॉकिंग्टन, *राइटिअस रामाः द ईवॉल्यूशन ऑफ़ ऐन एपिक* (दिल्लीः ऑक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1984); वी. राघवन, *द ग्रेटर रामायणा* (वाराणसीः ऑल इंडिया काशीराज ट्रस्ट, 1973); वी. राघवन, *द रामायणा इन ग्रेटर इंडिया* (सूरतः साउथ गुजरात यूनिवर्सिटी, 1975); वी. राघवन, संपा., *द रामायणा ट्रेडिशन इन एशिया*, (दिल्लीः साहित्य अकादमी, 1980); सी. आर. शर्मा, *द रामायणा इन तेलुगू ऐंड तमिलः ए कम्परेटिव स्टडी* (मद्रासः लक्ष्मीनारायण ग्रंथमाला, 1973); दिनेशचंद्र सेन, *द बंगाली रामायणाज़* (कलकत्ताः यूनिवर्सिटी ऑफ़ कलकत्ता, 1920); ऐस. सिंगारावेलु, 'ए कम्परेटिव स्टडी ऑफ़ द संस्कृत, तमिल, थाई ऐंड मलय वर्ज़न्स ऑफ़ द स्टोरी ऑफ़ रामा विद स्पेशल रेफ़रेंस टू द प्रोसेस ऑफ़ ऐकल्चरेशन इन द साउथईस्ट एशियन वर्ज़न्स', *जर्नल ऑफ़ द सियाम सोसाइटी* 56 (जुलाई, 1986): 137–85।

3 कामिल बुल्के, *रामकथा : उत्पत्ति और विकास* (प्रयाग, हिंदी परिषद् प्रकाशन, 1950)। जब मैंने बुल्के द्वारा की गयी तीन सौ रामायणों की गिनती के बारे में एक कन्नड़ विद्वान को बताया, तो वे बोले कि हाल ही में उन्होंने अकेले कन्नड़ में एक हज़ार से ज़्यादा रामायणों की गिनती की है; एक तेलुगू विद्वान ने भी तेलुगू में एक हज़ार रामायणों के होने का ज़िक्र किया। दोनों ने विभिन्न विधाओं में लिखी गयी रामकथाओं की गिनती की थी। लिहाज़ा, इस पर्चे के शीर्षक को शब्दशः न लें।

4 देखें, सिमोर चैटमैन, *स्टोरी ऐंड डिस्कोर्सः नैरेटिव स्ट्रक्चर इन फ़िक्शन ऐंड फ़िल्म* (इथाका, न्यूयॉर्कः कॉर्नेल यूनिवर्सिटी प्रेस, 1978)।

5 *श्रीमद् वाल्मीकीय रामायणम्* का पद्यानुवाद, अनुवादकः जयकृष्ण मिश्र 'सर्वेश' शास्त्री (लखनऊः भुवनवाणी ट्रस्ट, 1987), 279–83। [श्री रामानुजन ने डेविड शुलमैन के साथ मिल कर प्रासंगिक हिस्सों का अनुवाद जिस संस्करण के आधार पर किया है, उसके ब्यौरे इस प्रकार हैं: *श्रीमद् वाल्मीकिरामायण*, के. चिन्नास्वामी शास्त्रीगल एवं वी. ऐच. सुब्रह्मण्य शास्त्री द्वारा संपादित (मद्रासः ऐन. रामरत्नम, 1958)]

6 [श्री रामानुजन ने भाग 1.9 के चुने हुए छंदों के अंग्रेज़ी अनुवाद के लिए जिस संस्करण को आधार बनाया है, वह हैः *कम्बर इयारिया इरामायणम* (अन्नामलाई अन्नामलाई पालकलाईक्कलकम, 1957), खंड 1। श्री रामानुजन के अंग्रेज़ी अनुवाद के साथ कम्बरामायण के एक हिंदी अनुवाद को मिला कर यहां अनुवाद प्रस्तुत किया गया है। उसे हिंदी अनुवाद के ब्यौरे इस प्रकार हैं: *कम्ब रामायणम्*, अनुवाद एवं लिप्यंतरणः आचार्य ति. शेषाद्रि, एम.ए. (लखनऊः भुवनवाणी ट्रस्ट, 1980), पृ. 276–280]

7 सी. ऐच. टॉनी, अनु., ऐन. ऐम. पेंजर, संपा., *द ओसन ऑफ़ स्टोरी*, 10 खंड (संशोधित संस्करण 1927; पुनर्मुद्रण, दिल्लीः मोतीलाल बनारसीदास, 1968), 2:45–46।

8 रॉबर्ट पी. गोल्डमान द्वारा अनूदित *द रामायणा ऑफ़ वाल्मीकि*, खंड 1: बालकांड (प्रिंसटनः प्रिंसटन यूनिवर्सिटी प्रेस, 1984) में पृ. 15 पर ऐसी दृष्टियों के विवेचन का जो निचोड़ दिया गया है, उसे देखें। इससे असहमति रखने वाले विचार के लिए देखें, शेल्डन आई. पोलॉक, 'द डिवाइन किंग इन द इंडियन एपिक', *जर्नल ऑफ़ द अमेरिकन ओरिएंटल सोसाइटी* 104, संख्या 3 (जुलाई–सितंबर 1984): 505–28।

9 ए. के. रामानुजन, अनु., *हाइम्स फ़ॉर द ड्राउनिंगः पोयम्स फ़ॉर विष्णु बाइ नम्मालवार* (प्रिंसटनः प्रिंसटन यूनिवर्सिटी प्रेस, 1981), 47। [हिंदी अनुवाद इस लेख के अनुवादक द्वारा]

10 *अध्यात्म रामायण*, 11.4.77–78। देखें, राय बहादुर लाला बैजनाथ, अनु., *द अध्यात्म रामायणा* (इलाहाबादः द पाणिनी ऑफ़िस, 1913; *सेक्रेड बुक्स ऑफ़ हिंदूज़* में अतिरिक्त खंड 1 के रूप में पुनर्मुद्रित, न्यूयॉर्कः ए.ऐम.ऐस. प्रेस, 1974), 39।

11 देखें, ऐस. सिंगारवेलु, 'ए कम्परेटिव स्टडी ऑफ़ द संस्कृत, तमिल, थाई ऐंड मलय वर्ज़न्स ऑफ़ द स्टोरी ऑफ़ रामा'।

12 संतोष ऐन. देसाई, 'रामायणा – ऐन इंस्ट्रूमेंट ऑफ़ हिस्टॉरिकल कॉन्टैक्ट ऐंड कल्चरल ट्रांसमिशन बिटवीन इंडिया ऐंड एशिया', *जर्नल ऑफ़ एशियन स्टडीज़* 30, संख्या 1 (नवंबर 1970): 5।

13 *क्रिटिकल स्टडी ऑफ़ पउमचरियम* (मुज़फ़्फ़रपुरः रिसर्च इंस्टीट्यूट ऑफ़ प्राकृत, जैनोलॉजी ऐंड अहिंसा, 1970), 234।

14 रामे गौड़ा, पी. के. राजशेखर, एवं ऐस. बसवय्या, संपा., *जनपद रामायण* (मैसूरः ऐन. पी., 1973; कन्नड़ में)।

15 वही, 150–51।

16 देखें, ए. के. रामानुजन, 'द इंडियन इडीपस', *इडीपसः ए फ़ोकलोर केसबुक* में, संपा. एलां डुंडेस और लॉवेल एडमंड्स (न्यूयॉर्कः गारलैंड, 1983), 234–61।

17 संतोष ऐन. देसाई, *हिंदूइज़्म इन थाई लाइफ़* (बम्बईः पॉपुलर प्रकाशन, 1980), 63। *रामकीर्ति* पर यहां जो विचार किया गया है, उसके लिए मैं देसाई और सिंगारवेलु के काम का ऋणी हूं।

18 वही, 85।

19 *कम्बर इयारिया इरामायणम* के खंड 1 के 1.1 से चुने हुए छंदों का अनुवाद। [हिंदी अनुवाद के लिए, पूर्ववत, रामानुजन के अंग्रेज़ी अनुवाद के साथ–साथ आचार्य ति. शेषाद्रि के हिंदी अनुवाद की मदद ली गयी है।]

20 देखें, डेविड शुलमैन, 'सीता ऐंड शतकंठरावन इन ए तमिल फ़ोक नैरेटिव', *जर्नल ऑफ़ इंडियन फ़ोकलोरिस्टिक्स* 2, संख्या 3/4 (1979): 1–26।

21 पीअर्स की अर्थवैज्ञानिक पदावली के लिए एक स्रोत 'लॉजिक ऐज़ सेमिऑटिक' है। उसके लिए देखें, चार्ल्स सैंडर्स पीअर्स, *फ़िलॉसोफ़िकल राइटिंग्स ऑफ़ पीअर्स*, जस्टस बकलर द्वारा संपादित (1940: पुनर्मुद्रण, न्यूयॉर्कः डोवर, 1955), 88–119।

22 दिनेशचंद्र सेन, *बंगाली रामायणाज़*।

23 रॉबर्ट पी. गोल्डमान, संपा., *द रामायणा ऑफ़ वाल्मीकि*, सात खंड (प्रिंसटनः प्रिंसटन यूनिवर्सिटी प्रेस, 1984)।

24 जो तेलुगू क़िस्सा मैं सुनाने जा रहा हूं, वह मैंने जुलाई 1988 में हैदराबाद में सुना, और इसके साथ–साथ मैंने कन्नड़ और तमिल के पाठ भी इकट्ठा किये हैं। रामायण के इर्द–गिर्द चलने वाले और क़िस्सों के उदाहरणों के लिए देखें, ए. के. रामानुजन, 'दू रिल्मस ऑफ़ कन्नड़ फ़ोकलोर', *ऐनदर हार्मनीः न्यू एस्सेज़ ऑन द फ़ोकलोर ऑफ़ इंडिया* में, संपा. स्टूअर्ट ऐच. ब्लैकबम और ए. के. रामानुजन (बर्कले और लॉस एंजिलिसः यूनिवर्सिटी ऑफ़ कैलिफ़ोर्निया प्रेस, 1986), 41–75।

अनुवाद - संजीव कुमार
Email - sanjusanjeev67@gmail.com

नया पथ, अक्टूबर-दिसम्बर 2011 में पृष्ठ 5-31 पर प्रकाशित